
चन्दामामा
का मासिक पत्र
1st April



उसके बाद राजमहल की सबसे ऊँची मञ्जिल में जाकर क्या बैठे कि फिर वे नीचे नहीं उतरे, किसी को देखा भी नहीं। इस तरह चार महीने बीत गये। राजमहल उन्हें कैद की तरह लगा। उनकी उस कैद से बाहर जाने की इच्छा होने लगी। उन्होंने अपने नौकरों को बुलाकर गेरुआ वस्त्र, मिट्टी का पात्र लाने के लिए कहा। नाई को बुलावाकर अपना मुण्डन करवाया। अगले दिन गेरुआ वस्त्र धारण कर एक हाथ में मिट्टी का पात्र लेकर दूसरे हाथ में डण्डा ले ऊपर की मञ्जिल से उतर कर आये। रानी ने उन्हें देखा तो पर उन्हें वह पहिचान न सकी और किसी ने भी उनको न पहचाना। जब वे बाहर जा रहे थे तब भी किसी ने उनको न रोका।

सीवलीदेवी ने ऊपर की मञ्जिल में जाकर देखा कि उनके पति के सिर के बाल नीचे पड़े हुए थे। राजमहल में खोज शुरु हुयी; पर राजा का कहीं पता न था। सुना गया कि राजा ने सन्यास ले लिया था। सब उस तरफ जोर से रोते हुए गये जिस तरफ सन्यासी गया था। सीवलीदेवी व अन्य रानियों ने जाकर महाजनक को वापिस लौटने के लिए कहा। पर उन्होंने न सुनी।

सीवलीदेवी ने सेनापति को बुलाकर कहा कि शहर में जगह जगह लुके छुपे वह आग लगवाये। उसने रानी की आज्ञा का पालन किया। तब रानी ने पति के पास जाकर कहा- "महाराज! आपकी मिथिलानगरी में आग लग गई है। आपकी सारी सम्पत्ति अग्नि के हवाले हो गई है। उसकी रक्षा कीजिये।"

"रानी! जब मेरी कोई सम्पति ही नहीं है तो मैं उसे खोऊँगा कैसे?" महाजनक ने पूछा। वे उत्तर द्वार से नगर के बाहर चले गये। रानी और जनता भी उनके पीछे गई। वे न चाहते थे कि प्रजा उनके पीछे चले। इसलिए उन्होंने पीछे मुड़कर कहा- "इस नगर का अधिपति कौन है?"

"आप ही हैं महाराज।" प्रजा ने कहा।

"यह बात है तो जो इस लकीर को पार करके आये उनको दण्ड़ दो।" कहते हुए उन्होंने अपने डण्डे से एक लकीर खींचीं और आगे बढ़ गये। थोड़ी देर तक किसी ने लकीर पार न की। परन्तु यह देखकर कि उसका पति चला जा रहा है, सीवलीदेवी लकीर पार करके आगे दौड़ी। तुरत प्रजा ने भी उसको पार किया।

जल्दी ही रानी पति के पास पहुँची और उनके पैरों पर पड़कर कहा- "आप अपनी जनता को देखिये। वे सब आपको वापस आने के लिए कह रहे हैं।"

"मित्रों का, बन्धुओं का, घर का, देश का, सबका मैंने त्याग कर दिया है।" उन्होंने कहा। "अगर आप सन्यास ले लेंगे तो मेरा क्या होगा?" रानी ने पूछा।



"तुम यह देखो कि तुम्हारा लड़का मनसा, वाचा, कर्मणा कोई पाप न करे।" राजा ने कहा। वे बातें करते चलते जा रहे थे कि सूर्यास्त हो गया। उस दिन रात को एक जगह पड़ाव डाला गया। सवेरे होते ही महाजनक ने अपना पर्यटन शुरु कर दिया। रानी, अपने नौकर-चाकरों को पीछे जाने के लिए कहकर, स्वयं अपने पति के साथ चलने लगी।

चलते चलते वे एक नगर में पहुँचे। नगर के द्वार के पास कुछ बच्चे खेल-कूद रहे थे। एक लड़की छाज में कुछ साफ़ कर रही थी।

उसके एक हाथ में एक चूड़ी और दूसरे हाथ में दो चूड़ियाँ थीं। जब जब वह छाज उठाती तब तब चूड़ियाँ बजतीं।

उसको देखते ही महाजनक को एक विचार आया। उसने अपनी पत्नी को एक सबक सिखाकर भेजना चाहा। उन्होंने लड़की से पूछा-"तुम्हारे एक हाथ से तो आवाज़ से होती है। दूसरे हाथ से क्यों नहीं होता?"

उस लड़की ने कहा-"क्योंकि इस हाथ में दो चूड़ियाँ हैं, वे आवाज़ करती हैं-दूसरा बेकार है, अनर्थ है।"



राजा ने सीवली देवी की ओर मुड़कर पूछा-"तुमने इस लड़की की बात सुनी? दूसरा बेकार है। यदि मैं तुमको साथ आने देता हूँ तो मैं लड़की की बताई हुई नीति का उल्लंघन कर रहा हूँगा।"

रानी ने अपने पति को आगे जाने दिया। परन्तु तुरत वह दुःखी होने लगी। वह फौरन मुड़ी और फिर पति के साथ चलने लगी। वे कुछ दूर चलकर एक बाग बनानेवाले के पास आये।

वह बाण तैयार कर रहा था। बाण सीधा है कि नहीं, यह देखने के लिए, बाण को एक आँख के सामने रखकर उसने दूसरी आँख मूँद ली। "क्यों भाई! जब देखने के लिए दो आँखें है तो एक क्यों मूँद रखी है?" राजा ने बाण बनानेवाले से पूछा।

"दोनों आँखें खोले रखने से क्या यह पता लगेगा कि यह सीधा है कि नहीं? यह देखने के लिए तो एक आँख बन्द करनी होगी। दूसरी बेकार है।" बाण बनानेवाले ने कहा।

"देवी, सुना?" महाजनक ने अपनी पत्नी से पूछा।

सीवली देवी जान गई कि वह पति के साथ न रह सकेगी। इस दुःख में वह बेहोश गिर गई। उस समय महाजनक वन में घुस गये और कहीं चले गये।

जल्दी ही नौकर-चाकर आये। मूर्छित रानी के मुँह पर पानी छिड़क कर उसको होश में लाया। मिथिला नगर वापस जाकर उसने अपने पुत्र दीर्घायु का राज्याभिषेक करवाया। बाग में एक कुटिया बनाकर एक संयासिनी की तरह वह रहने लगी। महाजनक ने हिमालय में जाकर तपस्या की और सात दिनों में सिद्धि प्राप्त की।





जङ्गल में एक किसान रहा करता था। वह एक जगह हरी सब्जी पैदा किया करता। खरगोश की उनकी खाने की आदत हो गई। यह देखकर कि रोज उसकी शाक-सब्जियाँ कोई खा जाता था, किसान ने एक फन्दा तैयार किया।

खरगोश ने वह फन्दा नहीं देखा और वह उसमें फँस गया। फन्दा गले में लगा था। वह न छुड़ा पाया।

सवेरे किसान आया। खरगोश को देखकर उसने कहा-"रोज मेरी शाक-सब्जियाँ खा लेते थे न? अब लेता हूँ तेरी खबर!" वह खरगोश की मरम्मत करने के लिए छड़ी लेने गया।

"अब नहीं बच सकता। जाने आज सवेरे किसका मुँह देखा था।" खरगोश यह सोचकर बिना हिले डुले बैठ गया।

ठीक उसी समय लोमड़ी उधर से गुजरी। खरगोश को देखकर उसने पूछा-"ओहो, खरगोश है? यहाँ क्यों बैठे हुए हो? गले में वह फन्दा क्या है?"

खरगोश ने पेट पकड़कर ऐसा अभिनय किया मानों हँस रहा हो- "गजब की बात है। बच्चे जरा बीमार थे। वैद्य के पास से कस्तूरी की दवा लेने जा रहा था कि गौ सामने आई, उसने कहा-'हम अपनी लड़की की शादी कर रहे हैं। तुम्हें जरूर आना होगा।' मैंने कहा कि मैं बहुत जरूरी काम पर जा रहा हूँ। इस बार मुझे छोड़ दो। पर गौ न मानी, उसने कहा कि मुझे जाकर ही रहना होगा। मैंने कहा कि काम पूरा करके आ जाऊँगा। पर गौ को विश्वास न हुआ, उसने मुझे यहाँ बाँध कर रख दिया और कहा कि

श्री सुमन कुमार जोशी

मुझे लिवा लाने के लिए किसी को भेजेगी। यह बात है। मुझे छुड़ा दो। तुम्हारा भला होगा। जबतक मैं बच्चों को वह दवा न दे दूँगा तब तक और कोई काम न कर सकूँगा। अगर शादी में जाना ही हो तो तुझे बाँधकर चला जाऊँगा, वे तुझे ले जायेंगे।" खरगोश ने कहा।

लोमड़ी को इस बात पर विश्वास हो गया। "अच्छा, मैं तुझे छोड़ देता हूँ, तुम मुझे बाँध दो। मुझे कोई नहीं शादी में बुलाता।"

खरगोश ने अपनी जगह लोमड़ी को बाँधकर कहा-"मैं जरा वैद्य के पास जा रहा हूँ, इस बीच शादीवाले आ ही जायेंगे।" वह थोड़ी दूर जाकर झाड़ी में छुप गया।

इतने में किसान छड़ी लेकर आया। लोमड़ी को देखकर उसने कहा- "यह क्या? शाक सब्जी चुराने वाले की जगह मुर्गी चुराने वाली आई है? ठहर, तेरी पीठ पूजा करता हूँ।" उसने छड़ी से लोमड़ी को धुन दिया। फिर वह अपने कुत्तों को लेने गया।

तब खरगोश वापस आया, लोमड़ी को देखकर उसने पूछा- "अभी यहीं हो? शादीवाले नहीं आये?"

"मुझे शादी वादी कुछ नहीं चाहिये। यह फन्दा जल्दी खोल।" लोमड़ी ने कहा। परन्तु खरगोश इधर उधर की गप्पें लगाने लगा क्योंकि तुरन्त खोल देने से लोमड़ी उसे जिन्दा नहीं छोड़ती।

थोड़ी दूर पर किसान और उसके कुत्तों को देखकर, खरगोश ने लोमड़ी का फन्दा खोल दिया। कुत्ते भोंकते हुए आ रहे थे। लोमड़ी जोर से भाग गई। खरगोश भी कहीं रफू चक्कर हो गया।





[१५]

[जहाज के चकनाचूर होने के बाद, पिङ्गल शहतीर पर तैरता तैरता एक रेगिस्तान के किनारे पर लगा। नवाब के एक सरदार, हसन गौरी से उसका परिचय हुआ। दोनों मिलकर रेगिस्तान के डाकुओं को पकड़ने के लिए इपी के किले की ओर निकले। उसके बाद...]

नवाब की ऊटों की पल्टन के सरदार हसनगौरी ने जिस ओर हाथ उठाकर दिखाया था उस ओर पिङ्गल ने देखा। सामने रेगिस्तान में एक पुराना किला था। किले के पास एक पहाड़ी नाला वह रहा था। उसके दोनों ओर लगे खजूर के पेड़ हवा में झूम रहे थे। न किले की बुर्जों पर न दीवारों पर ही कोई दिखाई देता था। सब सुनसान था।

"यही है क्या आपका इपी का किला?" पिङ्गल ने पूछा।

"हाँ, पिङ्गल, वे जो पहाड़ दूरी पर दिखाई देते हैं उन पर जाता एक तङ्ग रास्ता दिखाई दे रहा है न? वही रास्ता है जो तेहरान से कैरो जाता है। यह जो किला है, इसमें यात्री प्रायः पड़ाव करते हैं। रास्ते में डाकुओं से उनकी रक्षा करने के लिए यहाँ यह इपी का किला बनाया गया



है। इसकी सुरक्षा के लिए दो सौ सैनिक भी नियुक्त हैं। वे सब अब कहाँ है? सब जगह नीराबता है। सब सुनसान जान पड़ता है। कोई काफले भी आते जाते नहीं दिखाई देते।

"किले में जाकर ही तो हमें पता लगेगा कि वहाँ क्या हो रहा है। हो सकता है, जैसा आपका भी ख्याल था, इस रेगिस्तान के ड़ाकू 'गिद्ध' ने हमला किया होगा और किले के सैनिकों को मार दिया होगा।" पिङ्गल ने सोचकर कहा।

"यही हुआ होगा। परन्तु उस 'गिद्ध' का साथी भी कोई नहीं दिखाई देता। कुछ समझ में नहीं आता क्या बात है!" हसनगौरी ने अचरज करते हुये कहा।

अपने ऊँट को आगे बढ़ाते हुये पिङ्गल ने कहा-"गौरी साइब! हमारे लिये यहाँ खड़ा होकर इधर उधर के अनुमान करना व्यर्थ है। जब तक हम किले के फाटक तक नहीं पहुँचते हैं, तब तक न मालूम हो सकेगा वहाँ कितनी भयङ्कर लड़ाई हुई है। शायद रेगिस्तान के ड़ाकुओं ने पहले किले के दरवाजे को जला दिया होगा। फिर अन्दर घुसकर सिपाहियों का खातमा कर दिया होगा।"

"हाँ, हाँ! ठीक है। बिना खूब मुकाबले किये हमारे साथी घुटने टेकनेवाले नहीं हैं। शायद रेगिस्तान के डाकू सैकड़ों की संख्या में आये होंगे। किले का घेरा डाला होगा। लड़ाई हुई होगी।" हसनगौरी ने कहा।

धीमे धीमे पिङ्गल और हसनगौरी, अपने अपने ऊँटों पर किले की दीवार के साथ साथ थोड़ी दूर चलकर फाटक के पास

आये। कुछ देर बाद इसनगौरी के और सिराही भी वहाँ आये।

किले का फाटक सुरक्षित था। वह जैसे कि साधारणतया बन्द किया जाता था, बन्द था। दोनों किवाड़ एक दूसरे से लगे हुये थे। वहाँ देखने से ऐसा न मालूम होता था, जैसे कोई लड़ाई हुई हो। सब चीजें अपनी अपनी जगह थी।

उस शान्त दृश्य को देखकर हसनगौरी जोर से हँसा। फिर एक छलाङ्ग में ऊँट पर से कूदा। उसने कहा-"पिङ्गल! हम व्यर्थ डरते रहे। भले ही चालाक, मक्कार हो यह गिद्ध, पर अभी हमारी सेना से आमने सामने लड़ने की उसमें हिम्मत नहीं है। अभी अभी मुझे मालूम हो रहा है कि यह इलाका क्यों इतना शान्त है। अजीब मामला है।" वह यह कहते कहते मुस्कराया।

पिङ्गल ने हसनगौरी की ओर इस प्रकार देखा, जैसे कुछ पूछना चाह रहे हो। हसनगौरी ने पास आकर पिङ्गल के कान में कहा-"अरे, हमारे लोगों ने पेट भर पी ली होगी



और नशे में घोड़े बेचकर सो रहे होंगे।"

पिङ्गल को यह बात ठीक न लगी। उसने सिर हिलाकर कहा-"अगर यह मान भी लिया जाय तो यह सिपाही 'गिद्ध' डाकू के हाथ कैसे आया? वह भी तो किले के रक्षकों में से एक था। क्या कारण है?"

"हो सकता है शायद किले से वह बाहर अकेला आया होगा, पीकर नशे में, खजुर के नीचे अकेला सो गया होगा और उस 'गिद्ध' डाकू ने उसका खातमा कर दिया होगा।" हसनगौरी ने कहा।



पिङ्गल एक क्षण तो रुका, फिर किले के फाटक की ओर जाते हुये उसने कहा-"जो कुछ आप कह रहे हैं, उसमें से कोई भी बात हो सकती है और हो सकता है कि जैसा कि हमने सोचा था किले पर हमला भी किया होगा। पहले यह देखना है कि फाटक अन्दर से बन्द है कि नहीं।" उसने पास जाकर ऊँचे, देवदारू के किवाड़ों को दोनों हाथों से पीछे की ओर और से धकेला।

पिङ्गल शीघ्र जान गया कि उतने बल की आवश्यकता न थी। अन्दर से बन्द फाटक हाथ रखते ही किर किर करते पीछे हट गये। यह देखते ही पिङ्गल चिल्लाता दीवार की ओर भागा। अगले क्षण फाटक के पीछे रखा बारुद फूट पड़ा। ऐसी आवाज हुई मानों आकाश टूट कर गिर गया हो। दरवाजा टूट गया। किले का अगला भाग भी टूट गया। जगह जगह ईंट पत्थर गिर गये।

उस शब्द और आग ने सब को अचम्भे में डाल दिया। किवाड़ों और किले के पत्थरों के लगने के कारण कई को चोट लगी। वे चीखने-चिल्लाने लगे। कई ऊँट भी बुरी तरह चिल्लाये और सवारों को दूर फेंक कर रेगिस्तान में इधर उधर भागने लगे।

धुएँ और धूल के कम होने के बाद पिङ्गल ने चारों ओर देखा। ऊँटो की पल्टन में कई मर गये थे। कई घावों के कारण कराह रहे थे। जरा सम्भल कर पिङ्गल हसनगौरी की खोज करने लगा। वह हवा के जोर से पास के एक खजूर के पास जा गिरा था। पिङ्गल के देखते ही वह कराहता कराहता उठकर बैठने का प्रयत्न करने लगा।

पिङ्गल ने हसनगौरी के पास जाकर अपना हाथ देते हुए पूछा-"कहीं बड़ी चोट तो नहीं लगी है?"

"नहीं तो। पहि जब बारुद फूटा तो हवा के जोर से में यहाँ आ पड़ा। अच्छी किस्मत थी।" हसनगौरी ने हाँफते हुये कहा।

"अरे, यह बात धीमे क्यों करते हो हसन? जब आसानी से फाटक खुले तभी मैं समझ गया था कि उसके पीछे कोई बड़ा गट्ठर था। इसलिये मैं जोर से चिल्लाया और किले की दीवार की ओर भागा। पर बदकिस्मती से, मेरा चिल्लाना था कि वह बारूद भी फूट गया।" पिङ्गल ने पीछे मुड़कर देखा- "करीब करीब सब कुछ नष्ट हो गया है। तीन चौथाई सिपाही और ऊँट भी मर मरा गये हैं। बड़ा नुकसान हुआ है।"

कठिनाई से हुसन खड़ा हुआ। कपड़ों की धूल झाड़ते हुये उसने कहा-"यह गिद्ध डाकू की हमें मारने की चाल है। किले के सब सिराहियों को मारने के बाद, उसने अन्त में हमें मारने के लिये यह चाल चली थी। अब हमें एक ही काम



करना है। हम बचे खुचे लोग उस हत्यारे की खोज में निकलेंगे और उसकी बोटी बोटी काट काट कर उसको मार देंगे।"

इसके बाद, पिङ्गल और हसन गोरी मिलकर, सिपाहियों को किले की दीवारों की छाया में ले जाकर उनकी मरहम पट्टी करने के लिये कुछ को नियुक्त कर बाकी लोगों को लेकर वे किले में घुसे।

किले में जो उन्होंने देखा उसके कारण वे निश्श्रेष्ट से हो गये। वहाँ का हर मकान तम्बू भी जला दिया गया था। नङ्गी दीवारें खड़ी थी, जहाँ तहाँ चीजें



बिखरी पड़ी थीं। शस्त्र अस्त्र पड़े हुये थे। कदम कदम पर मृत सैनिकों की लाशें थीं। भयानक दृश्य था।

"पिङ्गल! यहाँ तो एक भी सैनिक जीवित नहीं मालूम होता। यहाँ सचमुच क्या घटना घटी है सिवाय उस 'गिद्ध' डाकू के कोई नहीं जानता। अगर इतनी बड़ी सेना को वह नष्ट कर सका है तो हो न हो, किले में ही उसका कोई साथी रहा होगा।" हसन ने कहा।

चारों ओर देखते हुये पिङ्गल ने कहा- "हो सकता है। तब हम समय क्यों व्यर्थ करें? इसी डाकू का पीछा करें। यह मालूम करें वह रेगिस्तान में किधर गया है। पर यह कैसे मालूम किया जाय? क्या रास्ता है?"

"यह तो कोई बहुत कठिन काम नहीं है।" कहते हुये हसन गौरी बाहर की ओर निकला। फिर उसकी आज्ञा पर पाँच छः सैनिक रेगिस्तान में हर तरफ थोड़ी दूर गये और देख दाखकर वापस आये।

उन्होंने ऊँटो के पैरों के निशान से अनुमान किया कि 'गिद्ध' का गिरोह किस तरफ गया था। उन्होंने वह सरदार को बता दिया। हसनगौरी ने दो, तीन कोस की दूरी पर पहाड़ियों को, पिङ्गल को दिखाते हुये कहा-"'गिद्ध,' सीधे उन पर्वतों की ओर गया होगा। इस विजय के बाद वह फूला न समाता होगा और अपना समय मनोरञ्जन में बिता रहा होगा। उसकी चाल के अनुसार, उसका अनुमान होगा कि हम भी बारूद के फूटने के कारण मरमरा गये होगे।" पिङ्गल ने सिर हिलाया।

थोड़ी देर में सैनिको को साथ लेकर, हसन गौरी के साथ पिङ्गल भी उन

पहाड़ियों की ओर चला। एक घण्टे के बाद वे एक नाले के पास पहुँचे। पिङ्गल ने दोनों तरफ बड़ी बड़ी चट्टानों को देख कर कहा-"हसन, हम सब का यहाँ दो गुटों में बँट जाना अच्छा है। हम अपने ऊँटों को यहीं छोड़ दें। इन पत्थरों को पीछे या गुफाओं में। वह कहाँ छुआ हुआ है देखें, अगर कहीं दिखाई दिया तो हम एक दूसरे को इशारा करेंगे, तब दोनों मिलेंगे और उसकी खबर लेंगे।"

हसनगौरी इसके लिए मान गया। पिङ्गल कुछ सिपाहियों को साथ लेकर, चट्टानों पर उतरते चढ़ते, "गिद्ध" की खोज करने लगा। धीमे धीमे प्रकाश कम हो गया और अन्धेरा बढ़ने लगा।

उस समय, यकायक पिङ्गल को, जहाँ वह खड़ा था, उससे नीचे कुछ आहट सुनाई दी, वहाँ कोलाहल होने लगा। उसने अपने सैनिकों को सावधान किया। फिर वह एक ऊँचे चट्टान के पीछे से देखने लगा।

समतल भूमि में कई लोग झुण्ड बनाकर गा और नाच रहे थे।



उनकी पोषाक व हाव भाव देखते ही पिङ्गल ताड़ गया कि वे रेगिस्तान के ड़ाकू थे। पहले ही निश्चित सङ्केत की सूचना देने के लिए, पिङ्गल ने भोपू से आवाज की।

नीचे, जो नृत्य, सङ्गीत, कोलाहल हो रहा था वह सहसा बन्द हो गया। जो भोंपू में उसने आवाज दी थी, वह ड़ाकुओं ने भी सुन ली थी, यह पिङ्गल जान गया। अब देरी करना अच्छा न था। उसने तुरन्त एक बड़ा पत्थर नीचे लुढ़का दिया। उसने सैनिकों को भी पत्थर लुढ़काने की आज्ञा दी।

अभी पत्थर ठीक तरह नीचे पहुँचे भी न थे कि कुछ बाण उसके पास के पत्थर पर लगे। पिङ्गल ने एक पत्थर की आड़ से नीचे की ओर देखा। कुछ डाकू, भाले हाथ में लेकर, चिल्लाते चिल्लाते पहाड़ पर चढ़ रहे थे। उसी समय कुछ लुढ़कते पत्थर उन पर गिरे और वे इधर उधर भागने लगे।

पिङ्गल को यह जानकर खुशी हुई कि हसन तक उसका सङ्केत पहुँच गया था। तुरन्त बड़े बड़े पत्थर जोर से नीचे धकेलते, वह नीचे की ओर उतरा। हसनगौरी के सैनिक, सिंह की तरह चिल्लाते चट्टानों पर से कूदते, ड़ाकुओं की तरफ भागे। पिङ्गल भी अपने सिपाहियों को लेकर उसी तरफ भागा।

जब दोनों गुट समतल भूमि पर पहुँचे तो ड़ाकू नौ दो ग्यारह हो गये। कई ड़ाकुओं को, हसनगौरी के सैनिकों ने पीछा करके भालों से मारा।

"पिङ्गल! इस अन्धेरे में हम उनका पीछा नहीं कर सकते। सूर्योदय होते ही हम उनकी खबर लेंगे।" हसनगौरी ने कहा। पिङ्गल को भी यह सलाह जँची। वह सिर हिलाता, वहाँ एक पत्थर पर बैठने को ही था कि उसे यह प्रतिध्वनित होता सुनाई दिया, "कौन है वह पिङ्गल? अवन्ती नगर का मछियारा ही न?"

"कौन! पद्मपाद?" कहता पिङ्गल उस तरफ मुडा, जिस तरफ से वे प्रश्न पूछे गये थे। एक ऊँचे पत्थर के पीछे से पद्मपाद हँसता हुआ यकायक सामने आया।

(अभी और है)





विचित्र भेंट

विक्रमार्क फिर एक बार पेड़ के पास गया। शव को उतार कर कन्धे पर डाल चुप चाप श्मशान की ओर चला। तब शब में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! तेरा हठ सचमुच आश्चर्यजनक है। परन्तु तुम जैसे हठी लोग भी कई बार बड़े विचित्र ढङ्ग से पेश आते हैं। यह दिखाने के लिए शल्य की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।"

किसी जमाने में शल्य नाम का एक गरीब नौजवान गान्धार देश में रहा करता था। वह देश विदेश में घूमने के लिए हमेशा उतावला रहता। इसलिए वह बड़ी मेहनत से कमाया करता और जो कुछ कमाता वह बचाकर रखता। उसने एक दिन अपनी माँ से कहा-"माँ, मुझे काशी तक जाने की इच्छा हो रही है।

तीन साल में जरूर घूमकर वापिस आ जाऊँगा। जो कुछ पैसा मैने बचाया है, उसमें से आधा, तीन साल तक तेरे गुजारे के लिए काफी होगा। बाकी रुपया मेरे खर्च के लिए काफी रहेगा।"

पहले तो माँ ने उसकी बात मानने में आनाकानी की; पर बाद में वह मान गई।

गान्धार देश में अच्छी नस्ल के घोड़े मिलते थे। इसलिए शल्य ने अपने देश में एक अच्छी नस्ल का घोड़ा खरीदा, उस पर सवार होकर काशी की यात्रा शुरू की। उसको वह काशी राजा को भेंट देना चाहता था। और उससे एक उपहार लेना चाहता था, जिससे यह सिद्ध हो सके कि वह काशी तक हो आया था।

शल्य घोड़े को अपने प्राण की तरह देखता। बहुत दिनों की यात्रा के बाद कोशल देश पहुँचा। वहाँ उसे एक धर्मशाला में रहने की जगह मिली। शल्य पर तो किसी की नज़र न गई; पर उसके घोड़े पर सभी की नज़र गड़ी थी। वैसा घोड़ा उन्होंने न देखा था।" इतना अच्छा घोड़ा हमारे राजा के पास भी नहीं है।" लोग सोचने



लगे। यह खबर जल्दी ही कोशल देश के राजा के कान में भी पड़ी। उसने अपने सैनिकों को भेजकर धर्मशाला से शल्य को और उसके घोड़े को मँगवाया।

"क्यों भाई, तुझे यह घोड़ा कहाँ मिला है?" राजा ने शल्य से पूछा।

"महाराज! मैं गान्धार देश का हूँ। वहाँ इस प्रकार के घोड़े बहुत मिलते हैं।" शल्य ने कहा।

"तो क्या यह घोड़ा मुझे बेचोगे? हजार मुहरें दूँगा।" राजा ने कहा।

"महाराज। इसे बेचने का मेरा इरादा नहीं है।" शल्य ने कहा।

"यह बात है तो दो हज़ार मुहरों में दो। और तेरी सवारी के लिए एक घोड़ा मुफ्त में दूँगा।" राजा ने कहा।

"चाहे आप कुछ भी दें। मैं इस घोड़े को नहीं बेचूँगा, महाराज।" शल्य ने कहा।

"यह बात है तो मुझे यह भेंट देकर, मुझ से कुछ और भेंट में ले लो।" राजा ने कहा।

"मैंने इसे और किसी को भेंट में देने की सोची है।" शल्य ने कहा।

"किसको?" राजा ने आश्चर्य से पूछा।

"काशी के राजा को।" शल्य ने कहा।

कोशल देश के राजा की आँखे गुस्से से लाल हो गईं। "क्या तुम यह नहीं जानते कि हमारे राज्य की और उनके राज्य की लड़ाई हो रही है। तुम्हारे लिए वहाँ जीते जी जाना भी बहुत मुश्किल है। हमारे सैनिक नहीं तो उनके सैनिक तुझे मार देंगे।" राजा ने कहा।

"अगर यह विधि में लिखा है तो क्या हम उसे रोक सकेंगे, महाराज?" शल्य ने कहा।



कोशल देश के राजा ने कुछ देर सोचकर कहा-"अच्छा, जैसी तेरी मर्जी, तेरी यात्रा के लिए मैं तुझको कुछ निशानियाँ दूँगा। अगर तू सुरक्षित काशी नगर पहुँच गया, वापस जाते समय मुझे मिलकर बताना कि काशी राजा ने तुम्हें क्या उपहार में दिया था।"

"अच्छा हुजूर!" शल्य ने कहा।

कोशल देश से जाने के लिए राजा की निशानियों ने उसकी बहुत मदद दी। वह कुछ दिनों में काशी नगर पहुँचा। काशी राजा के दर्शन कर उसने कहा-"महाराज में गान्धार देश से आ रहा हूँ। मैं आपको भेंट देने यह घोड़ा लाया हूँ। स्वीकार कीजिये।"

काशी का राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उसको अपनी नौकरी में रख लिया और उसके लिए वेतन भत्ते की सब सुविधा कर दी।

एक साल बीत गया। शल्य ने राजा के पास जाकर कहा-"महाराज, अब मुझे जाने की आज्ञा दीजिये।"

"यह क्या? मेरी नौकरी का मोह क्या खतम हो गया है?" राजा ने पूछा।





"नहीं महाराज! मैं हरिद्वार जाना चाहता हूँ।" शल्य ने कहा।

"यही बात है तो जरूर जाकर आओ।" राजा ने कहा। उसने उसकी यात्रा के लिए आवश्यक प्रबन्ध किया।

परन्तु यह यात्रा उसके लिए दुखद रही। रास्ते में वह इतना रोगी हो गया कि मरते मरते बचा। राजा का दिया हुआ रुपया सब खर्च हो गया। वह सूखकर काँटा हो गया। सिवाय पहने हुए चीथड़ों के उसके पास कुछ न रहा। वह भीख माँग कर पेट भरता। मरता जीता वह काशी नगर पहुँचा। जब वह राजमहल में पहुँचा तो उसको किसी ने न पहचाना।

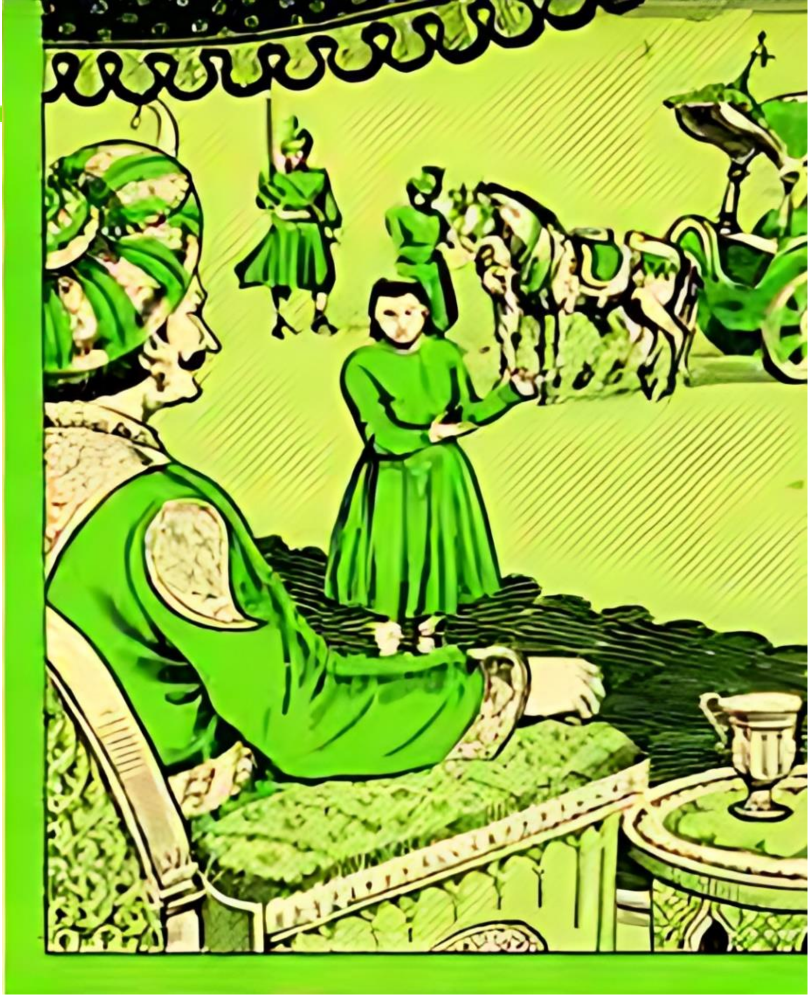
उस हालत में जब वह फाटक के पास छटपटा रहा था, राजा ने उधर आकर शल्य को देखा। देखते ही उसने उसको गले लगा लिया-"क्यों, क्या हुआ? क्यों इस तरह कमजोर हो गये हो? ये कपड़े क्या है?" राजा ने पूछा।

शल्य ने जो कुछ गुज़रा था, राजा को बताया। इस बार राजा ने उसको और अच्छी नौकरी दी। और उसको फिर से स्वस्थ बनाने के लिए औषधियों व उत्तम आहार का भी प्रबन्ध किया।

एक और वर्ष बीत गया। शल्य ने एक दिन राजा के पास जाकर कहा-"महाराज! जाना चाहता हूँ। आज्ञा दीजिये।" राजा ने पहले की तरह कहा-"यह क्या? क्या नौकरी का मोह इतनी जल्दी खतम हो गया है?"

"नहीं महाराज। घर से निकलते समय मैंने अपनी माँ को वचन दिया था कि तीन साल में वापिस चला आऊँगा। मुझे अपना वचन निभाने के लिए अब जाना होगा।" शल्य ने जवाब दिया।

"तो मैं तुम्हें न रोकूँगा। जरूर जाओ।" राजा ने कहा। उसने शल्य को बहुत सा धन, रथ, घोड़े वगैरह दिये। "इन्हें चोर चुरा सकते हैं। रास्ते में इन पर और कोई खतरा भी आ सकता है। इसलिए तुम्हें एक ऐसी चीज़ देता हूँ, जो हमेशा तुम्हारे पास रहे। वह है यह अंगूठी। इसे हमेशा अपनी अंगुली पर लगाये रखो। यदि कोई उदार उत्तम पुरुष दीख पड़े तो उसे देना, किसी ऐसे वैसे को मत देना।"



शल्य रास्ते में कोशल देश के राजा से भी मिला।

"तुमने क्या अपने घोड़े को काशी के राजा को भेंट दिया था? उसके बदले में उन्होंने तुम्हें क्या दिया?" कोशल देश के राजा ने पूछा।

"उन्होंने मुझे नौकरी दी।" शल्य ने कहा।

"उन्हें मैं भी दे सकता था। और क्या दिया?" कोशल देश के राजा ने पूछा।

"मुझे बहुत सा धन दिया। यात्रा के लिये घोड़े और रथ भी दिये।" शल्य ने कहा।

उन्हें मैं भी वह दे सकता था। क्या तुम्हें पैदल गान्धार देश भेजता? और क्या दिया?" कोशल देश के राजा ने पूछा।

"इन सब को यदि चोरों ने चुरा भी लिया तो उनकी स्मृति बनाये रखने के लिए उन्होंने अपनी यह एक अंगूठी दी।"

"हाँ शायद मुझे यह विचार न सूझता।" कोशल के राजा ने कहा।

"उन्होंने मुझ से एक और बात भी कही महाराज! उन्होंने यह भी कहा कि इसे उदार और उत्तम व्यक्ति को ही देना। किसी मामूली आदमी को मत देना। आप

इस अंगूठी को कृपया स्वीकृत करके मुझे अनुगृहीत कीजिये।" शल्य ने कहा।

कोशल के राजा ने बड़े आनन्द से शल्य का आलिङ्गन किया। उसे कुछ दिन अपने यहाँ अतिथि रखा। फिर उसको बहुत-से इनाम देकर विदा किया। उनको लेकर शल्य अपने देश पहुँचा। और सुख के साथ उसने बहुत समय अपनी माँ के पास बिताया। उसके बाद काशी और कोशल देश में कभी युद्ध न हुए।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "शल्य के हठ में कुछ मूर्खता भी नज़र आती है। जिस कोशल देश के राजा को उसने घोड़ा देने से इनकार कर दिया था उसको उससे अधिक कीमती अंगूठी उसने क्यों दी? वह जानता ही था न कि कोशल देश के राजा और काशी के राजा शत्रु थे। काशी के राजा ने उसे अंगूठी क्यों दी? इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जान बूझकर न दिया तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

"शल्य बिल्कुल मूर्ख नहीं था। उसको पहले ही मालूम हो गया था कि कोशल देश का राजा उदार था। उदार नहीं होता तो वह जबर्दस्ती उसका घोड़ा ले लेता और उसको अपने राज्य में से सुरक्षित काशी जाने भी न देता। शल्य ने उस अंगूठी को कोशल देश के राजा को देकर न केवल उन दोनों की मैत्री ही प्राप्त की अपितु उन दोनों में उसने मैत्री करवा दी। वह मूर्ख तो है ही नहीं, मेरी समझ में तो वह बहुत अक्लमन्द है।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही वेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।





एक गाँव में रामलाल नाम का एक गरीब रहा करता था। उसके पास बिल्कुल जमीन न थी।

रामलाल की यही इच्छा थी कि कुछ धन कमा कर, जैसे तैसे जमीन खरीद कर, वह भी उपज ले जाकर पेंठ में बेचा करे। उसके बहुत मेहनत करने पर भी मुश्किल से गुजारा भर के लिए मिलता।

आखिर रामलाल ने निश्चय किया कि कुछ भी हो, वह पेंठ में कुछ माल बेचेगा। उसके पास कुछ ऊन थी। उस ऊन को वह किसी को भी बेच सकता था, वह अधिक पैसे की न थी। इसलिये अगर वह उसे ले जाता तो सब हँसते।

एक दिन रामलाल जङ्गल गया और एक बोरे में काई भर लाया। उस पर उन रख कर वह पेंठ के लिए निकला।

उसकी तरह सोमलाल भी एक बोरा लेकर पेंठ में पहुँचा। वह एक और गाँव का था। उसके बोरे में तीन चौथाई जङ्गली नाशपाती और उस पर सुपारी थी।

पेंठ में पैर रखने की रामलाल की हिम्मत न हुई। वहाँ शाक-सब्जियों के ढेर के ढेर पड़े थे। गौ, भेड़, बकरियाँ घोड़े, सैकड़ों की संख्या में वहाँ बिकने के लिए आये हुये थे।

रामलाल पेंठ से कुछ दूर, पेड़ के नीचे अपना बोरा रखकर बैठ गया। सोमलाल भी वहाँ पहुँचा। दोनों ने आपस में पूछताछ की कि कौन क्या क्या लाया था। रामलाल ने बोरे में से ऊन निकाल कर कहा-"बहुत बढ़िया माल

योगेन्द्र

है।" सोमलाल ने अपना बोरा खोलकर कहा-"यह देखो सुपारी, निम्बू जितनी बड़ी बड़ी। पेठ में बहुत भीड़ भड़ाका है। हमारा माल कोई नहीं देखेगा। अगर हम अपने माल का अदला बदला कर लें तो अच्छा होगा न।" सोमलाल ने सुझाया।

"उन और सुपारी का अदला बदला?" रामलाल ने ललचाते हुये पूछा।

"सुपारी हुई तो क्या हुआ? माल सोने की तरह बढ़िया है और चाहो तो आधा आना नकद दे दूँगा।" सोमलाल ने कहा।

रामलाल मान गया। दोनों ने बोरे बदल लिये। सोमलाल चला गया।

"पहले मेरा आधा आना दे दो, फिर जाना।" रामलाल ने कहा।

"कर्ज लिख लो। बाद में दे दूँगा। मैं कहीं नहीं जाऊँगा। मेरा फलाना गाँव है। तुम जिससे चाहो पूछो वह मेरा नाम बता देगा। मैं साथ पैसे नहीं लाया हूँ। लाता तो क्या तुम्हें नहीं देता?" सोमलाल ने कहा।

रामलाल ने आधे आने के बारे में सोमलाल से प्रतिज्ञा करवाई। वे अपने



अपने घर चले गये। वे जान गये कि उन्होंने आपस में एक दूसरे को धोखा दिया था। आध आना वसूल करने के लिए रामलाल, सोमलाल के गाँव गया।

सोमलाल, उस गाँव के साहुकार के यहाँ खेती किया करता था। उसने रामलाल को देखकर कहा-"तुम तो मुझे डुबोकर रहे।"

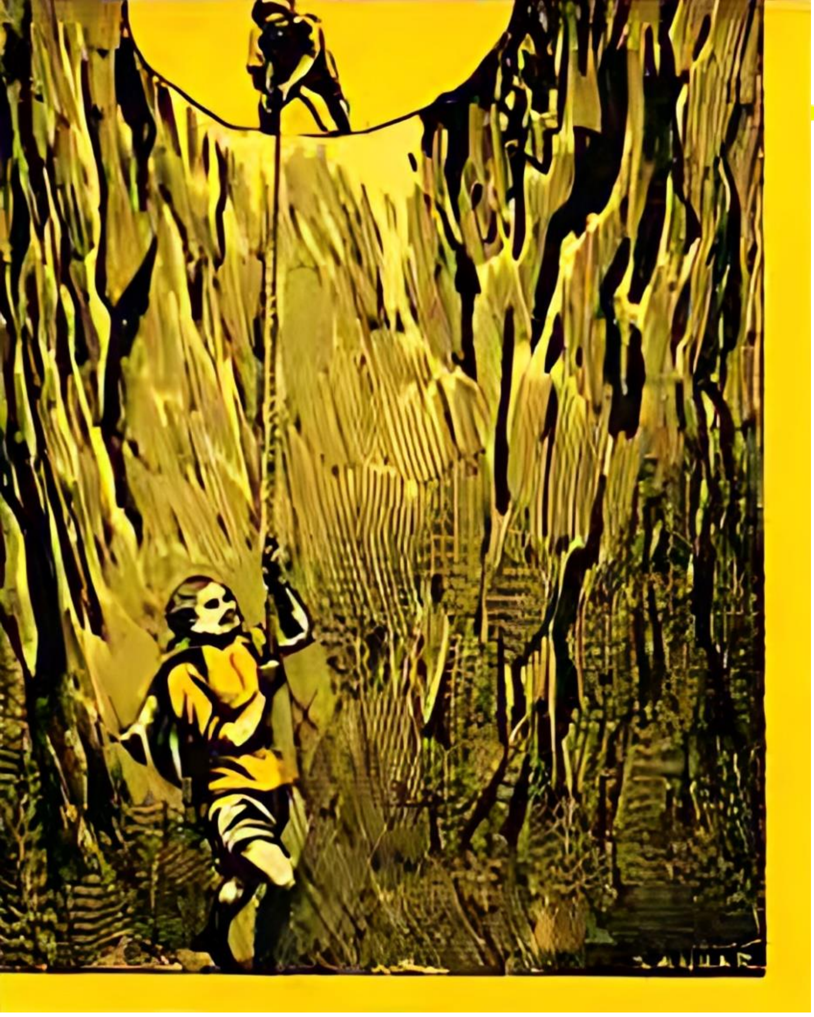
"तुमने क्या मुझे नहीं डुबोया था?" रामलाल ने पूछा।

"तो हिसाब बराबर।" सोमलाल ने कहा।

"यह सब नहीं चलेगा, तुम्हारे पास मेरा आध आना कर्ज है। प्रतिज्ञा भी की थी। वह दे दो।" रामलाल ने कहा।

"मेरे पास कानी कौड़ी भी नहीं है। परन्तु मैं एक तरीका बताता हूँ जिससे हम दोनों का फायदा हो सके। हमारे साहुकार के घर के पिछवाड़े में एक गहरा गढ़ा है। मैंने एक दिन साहुकार को उस गढ़े में सीढ़ी डालकर उतरते देखा था। उसने कुछ छुपाकर रखा होगा। आज हम दोनों रात को उस गढ़े में उतरेंगे और जो कुछ मिलेगा





आपस में बाँट लेंगे। मदद करोगे?" सोमलाल ने पूछा।

रामलाल मान गया। उसका ख्याल था कि अगर गढ़े में कोई खजाना मिलेगा तो वह थोड़ी बहुत जमीन खरीद सकेगा।

उस दिन रात को सोमलाल एक बोरा और रस्सी लाया। रात के समय दोनों साहुकार के घर के पिछवाड़े में गये। रामलाल ने रस्सी पकड़ ली। सोमलाल, बोरा और रस्सी लेकर गढ़े में उतर गया। उसने बहुत खोजा टटोला; पर गढ़े में सिवाय मिट्टी के कुछ न मिला।

"यह रामलाल बड़ा चालू है। यदि यह कहूँगा कि यहाँ कुछ नहीं है, वह रस्सी गढ़े में डाल कर चलता होगा। इसलिये जरा सम्भल कर ऊपर जाना होगा।" वह स्वयं बोरे में घुस गया और बोरे के मुख को रस्सी से बाँध दिया। फिर चिल्लाया- "जो कुछ यहाँ था मैंने बोरे में डाल दिया है। उसे ऊपर खींचों, फिर रस्सी निकाल कर नीचे डालना और मुझे भी ऊपर खींच लेना।" रामलाल ने बोरा ऊपर खींचा।

"इस सोमलाल पर विश्वास नहीं किया जा सकता। इसमें उसको क्यों हिस्सा दिया जाय? उसे इसी गढ़े में सड़ने दो।" यह सोच कर रामलाल बोरा पीठ पर रखकर गाँव की ओर चल दिया।

थोड़ी दूर चलने के बाद, रामलाल को बोरा भारी लगा। उसने उसे उतारा। सोमलाल बोरा खोलकर बाहर आ गया।

"अरे, दुष्ट! तूने मुझे फिर धोखा दिया?" रामलाल ने पूछा।

"तेरी ईमानदारी कहाँ गई? क्या सारा खजाना बिना मुझे हिस्सा दिये तूने हड़पने की कोशिश न की थी? हिसाब बराबर।" सोमलाल ने कहा।

"यह सब नहीं चलेगा। तूने मुझसे आध आना लिया है, देने की प्रतिज्ञा भी की थी।" रामलाल ने कहा।

"मैंने कब कहा है कि मैंने नहीं लिया है, जब मेरे पास होगा तब मुझसे वसूल कर लेना।" सोमलाल ने कहा। दोनों अपने अपने रास्ते चले गये।

उसके कुछ दिनों बाद सोमलाल की शादी हो गई। कुछ रुपया उसे दहेज में मिला। उसने साहुकार के खेतों में खेती करनी छोड़ दी। थोड़ी अपनी जमीन खरीद ली। उसी में खेतीबाड़ी करने लगा। उसमें थोड़ा फायदा हुआ। गाँव के बाहर घर भी बना लिया।

रामलाल हमेशा की तरह जी तोड़ मेहनत करके पेट भर रहा था। एक दिन उसको याद आया कि सोमलाल ने आधा आना कर्ज लिया था। वसूल करने के लिए वह उसके गाँव गया।

सोमलाल अपने घर के बाहर बैठा था। उसे रामलाल आता दिखाई दिया। उसने तुरन्त अन्दर जाकर पत्नी से कहा-"रामलाल आ रहा है। उससे मैंने कर्ज लिया था। मैं इस



तरह लेट जाऊँगा, जैसे मर गया हूँ। तू मुझपर पड़कर खूब रो, बिलख। अगर तू शाम तक रोती रही तो इस रामलाल का पीछा हमेशा के लिए छूट जायेगा।"

सोमलाल की पत्नी ने वैसा ही किया। रामलाल ने आकर सब देखा। परन्तु वह गया नहीं। घर के बराण्ड़े में बैठा रहा-"अरे, भाई! सोमलाल तेरा कर्ज़ क्या चुकायेगा? सोमलाल के सब कर्म खतम हो गये हैं।" कहती हुई की पत्नी बिलखने लगी।

"सोमलाल तो मेरा पुराना दोस्त है। उसका दहन संस्कार करवा कर ही

जाऊँगा।" रामलाल ने कहा। घर के बाहर खड़े होकर उसने शव उठाने वालों के पास खबर भेजी, वे आ गये।

"जब तक मेरे सब सम्बन्धी नहीं आ जाते हैं, तब तक शव को श्मशान नहीं ले जाया जा सकता।" सोमलाल की पत्नी ने कहा।

सूर्यास्त हो गया। रामलाल नहीं गया। अड़ोस पड़ोसवालों ने आकर कहा-"जब तक शव हटा नहीं दिया जायेगा, तब तक हम भोजन न कर सकेंगे। शव को तुरन्त उजड़े मन्दिर में ले जाकर रखो।"

"शव के लिए रतजगा कौन करेगा? मैं शव के साथ उस उजड़े मन्दिर में सवेरे तक न रहूँगी।" सोमलाल की पत्नी ने कहा।

"मैं हूँ न उसके लिए। मैं अपने अच्छे मित्र के शव को रात भर देखूँगा।" रामलाल ने कहा।

सोमलाल की पत्नी ने चुप-चाप पति से पूछा-"अब क्या किया जाय?

"मन्दिर ले जाने दे, घबरा मत।" सोमलाल ने कहा।

शव वाहकों ने उसको मन्दिर में पहुँचा दिया। रामलाल ने रतजगा शुरू की।



आधी रात हो गई। मन्दिर के बाहर आदमियों के आने की आहट हुई। रामलाल जाकर मन्दिर के अन्दर छुप गया। थोड़ी देर में चार चोर मन्दिर में आये। उनके सरदार ने एक गट्ठर उतारा। उसमें से कीमती गहने निकाल कर उनको चार हिस्सों में रखा। बँटवारे के लिए एक तलवार भी थी।

"इसको कौन लेगा?" चोरों के सरदार ने पूछा। "नहीं, यह बहुत अच्छी तलवार है। चाहो तो एक ही चोट से इस शव के दो टुकड़े किये देता हूँ।" कहकर चोरों का सरदार, तलबार लेकर सोमलाल के पास गया।

तुरन्त सोमलाल ने उठकर कहा- "अरे भूतो! तुम सब कहाँ हो?" वह जोर से चिल्लाया।

जैसे किसी ने जादू किया हो, चोर तुरत गायब हो गये। यह जानकर रामलाल सामने आया।

"देख हमारा भाग्य जग गया है। आ, हम सब का बँटवारा कर लें।" सोमलाल ने कहा। चोरों की लाई हुई चीजें उन्होंने आपस में बाँट लीं।



"सब ठीक है। मेरे आधा आने कर्ज के बारे में क्या कहते हो?" रामलाल ने पूछा। दोनों आपस में झगड़ने लगे।

इस बीच चोर बहुत दूर भागने के बाद एक जगह ठहरे। चोरों के सरदार ने अपने साथियों से कहा-"आज हमने बड़ा कायरता का काम किया है। हम जो कि बड़े बड़े योद्धाओं से नहीं डरते थे, सब माल यूँही छोड़ आये। हम में से अगर कोई दिलेर वहाँ जाकर यह देखे कि क्या हो रहा है, तो अच्छा हो।"

उसके साथियों ने जाने से इनकार किया। सरदार को खुद जाना पड़ा। वह कलेजा थामकर मन्दिर के बाहर खड़ा हो सुनने लगा। अन्दर रामलाल और सोमलाल खूब हो हल्ला कर रहे थे। "मेरा आधा आना क्या हुआ?" पूछ रहा था रामलाल। "तेरा आधा जाना तुझे दे दिया है, जा।" सोमलाल कह रहा था।

यह सुन चोरों का सरदार पसीना पसीना हो गया। उसने और चोरों के पास जाकर कहा-"अरे भाई! उस मन्दिर में जाने कितने भूत हैं। हम अनुमान भी नहीं कर सकते। हम जितना माल लाये थे उस सबको जब उन्होंने आपस में बाँटा तो एक एक के हाथ आध आना ही आया। वह भी कई भूतों को नहीं मिला। आज हमारा भाग्य अच्छा रहा। चलो चलें। जान बची लाखों पाये।" चोर चले गये।

आखिर, रामलाल और सोमलाल में समझौता हो गया। आधा आने के बदले में रामलाल ने चोरों की तलवार ले ली। रामलाल ने उस धन से जमीन खरीदी। शादी की, और खेतीबाड़ी करता आराम से रहने लगा, तब जाकर उसकी पेंठ में माल बेचने की इच्छा पूरी हुई।





किसी समय, बसरा शहर का मोहम्मद इबन सुलेमान, सुल्तान था। वह बगदाद के खलीफा हसन अल रशीद के नीचे सामन्त था। सुल्तान के यहाँ दो मन्त्री थे। उनमें वजीर अलि फदल बहुत उत्तम था। वजीर अलि मूयसानवी बहुत खराब था। इसलिये जनता अलि फदल को आदर अभिमान से देखती तो सानवी को देखकर डरती।

सुल्तान को एक दिन खबर मिली कि बसरा नगर में सब देशों से स्त्री गुलाम बिकने के लिये आई हुयी थीं। उसने अलि फदल को बुलाकर कहा-"बिकाऊ गुलामों में यदि कोई बहुत सुन्दर हो तो दस हजार दीनारों तक खर्च करके मुझे खरीदकर दो।" तुरन्त अलि फदल ने गुलामों के व्यापारियों के पास जाकर, सुल्तान के लिए एक गुलाम खरीदने की बातचीत की। उन स्त्रियों को, जिनका दाम एक हजार दीनार से अधिक था, उसने स्वयं जाकर देखा। परन्तु उनमें से एक भी अलि फदल को न जँची।

उसके बाद, गुलामों के व्यापारी उसे रोज नई नई सुन्दर स्त्रियाँ लाकर दिखाते। सुल्तान ने उसको तीस दिन का समय दिया था। तीस दिन पूरे हो गये थे। परन्तु उसे कोई गुलाम स्त्री न जँची थी। अलि फदल और समय माँगने के लिए घोड़े पर सवार होकर सुल्तान के पास जा ही रहा था कि एक व्यापारी ने आकर कहा-"आप जैसी सुन्दर स्त्री चाहते थे, वैसी एक बिकने आई है।"

"तो उसे साथ ले आओ।" कहकर, अलि फदल घोड़े से उतरकर फिर घर में

चला आया। थोड़ी देर बाद, व्यापारी ने एक गुलाम लड़की को लाकर वजीर को दिखाया। वह सचमुच बहुत सुन्दर थी। उसका नाम था, अनीस अल जलीस। अनीस अल जलीस का अर्थ "प्रियसखी" है। वह बहुत खूबसूरत तो थी ही, साथ साथ बहुत पढ़ी लिखी भी थी।

वजीर अलि फदल ने उसको खरीदने के इरादे से कहा-"मैं इस गुलाम के लिए दस हजार दीनारें दूँगा। मैं इसको अपने लिये नहीं खरीद रहा हूँ। सुल्तान के लिए खरीद रहा हूँ। दस हजार तक देने की अनुमति ही मुझे मिली है।"

"अगर यह सुल्तान के लिए हो तो जो कुछ दिया जायेगा मैं उसे लेने के लिए तैयार हूँ। परन्तु आप एक बात पर गौर फरमाइये। यह लड़की, बहुत दिनों के सफर के बाद आज ही बसरा पहुँची है। इसलिये हवा पानी का परिवर्तन रहेगा। इसे दस दिन आराम देकर फिर सुल्तान को दिखाइये।"

वजीर अलि फदल को यह सलाद जँची। उसने "प्रियसखी" को अपनी पत्नी को सौंपकर कहा-"यह लड़की



सुल्तान की दासी है। दस एक दिन हमारे घर रहेगी। देखो, अपना लड़का अली नूर इसको न देखने पाये।"

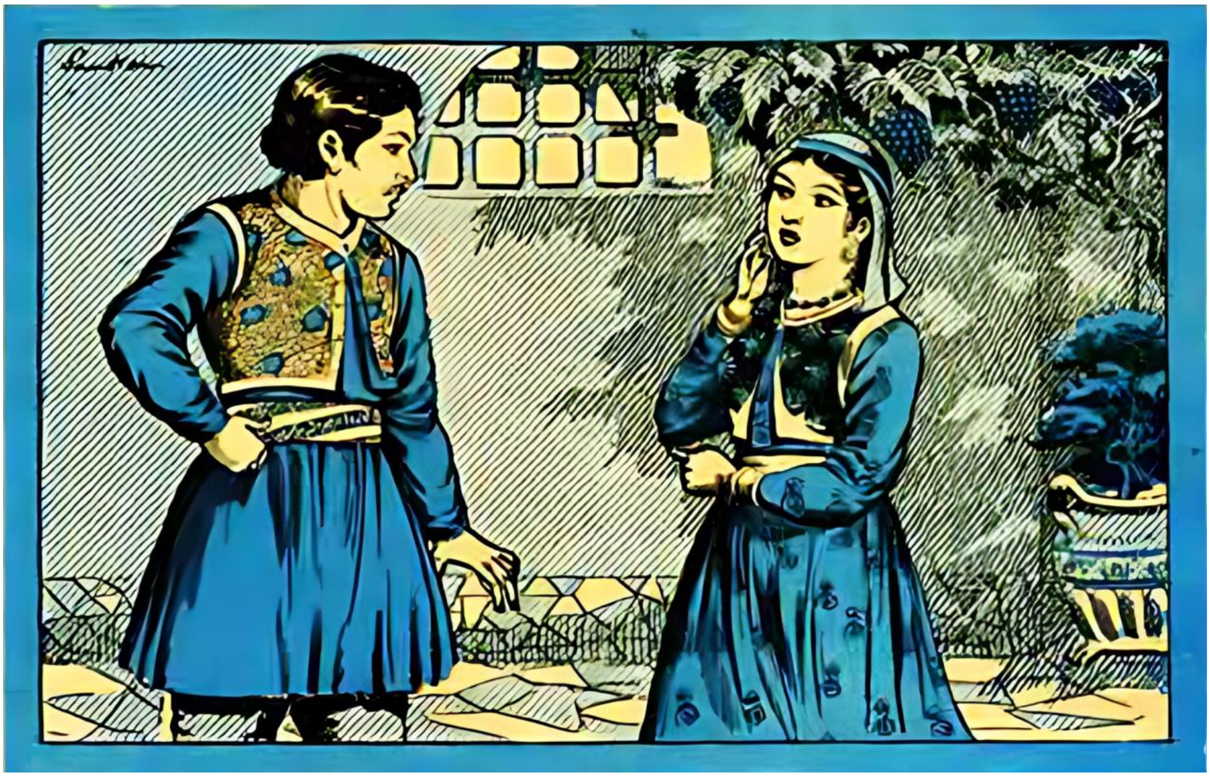
अलि फदल का लड़का अली नूर बहुत ही खूबसूरत नौजवान था। होने को तो अच्छा था; पर जरा भावुक स्वभाव का था। प्रियसखी को अगर वह देखेगा तो जरूर उससे प्रेम करेगा और सुल्तान के सामने वजीर को नीचा देखना पड़ेगा, यह वजीर की पत्नी जानती थी। इसलिये उसने प्रियसखी को हफ्ताह भर जनाना से बाहर न जाने दिया।

एक दिन जब वह गुसलखाने में गई हुयी थी तो अली नूर जनाना में आया। उसने प्रियसखी को देख लिया। चार आखें क्या हुई कि दोनों में प्रेम हो गया। उसको थोड़ा बहुत रुपया देकर उसने उससे शादी भी कर ली। अपने लड़के की करतूत देख कर वजीर अलि फदल को बड़ा रञ्ज हुआ। "मैने सुल्तान के यहाँ बहुत प्रतिष्ठा पाई है, अगर उनको यह मालूम हो गया तो मेरी सारी प्रतिष्ठा जाती रहेगी। मैं लोगों में सिर उठाकर न चल सकूँगा।" उसने अपनी पत्नी से कहा।

"यह बात सुल्तान तक पहुँचाने की जरूरत ही क्या है? समझ लीजिये कि लड़के के लिए एक स्त्री खरीदी है। क्या खराबी है? सुल्तान को एक और गुलाम खरीदकर दे देना।" पत्नी ने कहा।

अलि फदल ने अपने लड़के की गलती माफ करने का निश्चय किया। यह खबर अपनी माँ से जान अली नूर, प्रियसखी को लेकर घर आ गया।

अलि फदल ने जब देखा कि उसका लड़का और प्रियसखी बहुत मेल जोल से रह रहे थे तब उसका मन जरा शान्त



हुआ। "सब अल्लाह की मर्जी है।" उसने सोचा।

अलि फदल को डर लगा कि कहाँ सानवी सारी बात सुल्तान से जाकर न कह दे। सानवी ने कुछ हद तक असलियत मालूम भी कर ली थी, परन्तु क्योंकि सुल्तान गुलाम के खरीदने के बात बिल्कुल भूल चुका था इसलिये वह इस बारे में उससे कहने का साहस न कर सका।

कुछ समय बीत गया। बड़ा वजीर अलि फदल बीमार पड़ा। यह जानकर कि मौत नजदीक थी उसने अपने लड़के को बुलाकर, वसीयत की बातें तय करके हमेशा के लिए आँखें मूँद लीं। उस दिन सारा नगर में ऐसा कोई न था जो न रोया हो। पिता की मृत्यु के कारण अली नूर दुःख सागर में डूब गया। वह बहुत दिनों तक बाहर न आया। उसने किसी को न देखा। आखिर बड़े बुजुर्गों ने उसे समझाया बुझाया-"इस तरह दुखी होने से क्या फायदा? तुम अपने में अपने पिता को जिन्दा ही समझो।" इस सलाह के कारण अली नूर बदल गया। वह अपने मित्रों को बुलाकर रोज दावत देने लगा। बसरा





"बिना आगे पीछे देखे क्यों अन्धाधुन्ध यों रुपया बरबाद करते हो? आप सोच रहे हैं कि ये सब आपके पक्के दोस्त हैं?" प्रिय सखी ने कई बार अपने मालिक से कहा। पर उसके कान पर जूँ तक न रेंगी।

अन्त में उसके दोस्त भी गायब हो गये।

"जब तक आपके पास धन रहा तब तक वे मक्खियों की तरह भिनभिनाते रहे। अब एक दोस्त भी अपना मुँह नहीं दिखाता।" प्रिय सखी ने कहा।

के बड़े व्यापारियों के लड़के उसके दोस्त थे। उसके खर्च पर वे मौज उड़ाया करते। अली नूर नादान था। जो कुछ दोस्त माँगते वह दे देता। अगर उसका कोई दोस्त कहता- "नूर, उस जगह जो तुम्हारा बगीचा है, उस तरह का बगीचा मैंने कहीं नहीं देखा है।" कहने भर की देर होती और झट अली नूर कह देता- "अच्छा, तो जा, वह तेरा है।"

पैसा पानी की तरह खर्च हो गया। मैदान, बाग-बगीचे, उसने दोस्तों को दे दिये और खुद दीवालिया हो गया।

"तुम मेरे दोस्तों के बारे में फालतू शक कर रही हो। अगर मैं बिल्कुल कङ्गाल भी हो गया तो वे मुझे फिर से अपने पैरों पर खड़ा कर सकते हैं। शायद वे किसी काम पर लगे हुए होगे। क्योंकि मेरा अपना काम है इसलिए मैं ही उनके पास जाऊँगा। तुम ही देखोगी कि वे कैसे मेरी देख-भाल करते हैं।" अली नूर ने कहा। अच्छे कपड़े पहन कर वह व्यापारियों के बाजार में गया। एक मित्र के घर जाकर उसने खबर भिजवाई।

क्योंकि वह दोस्त उसे देखना न चाहता था इसलिए उसने नौकर के

द्वारा खबर भिजवा दी कि वह घर में न था।

"चोर कहीं का, धोखा देता है, दूसरे इतने नीच नहीं हैं।" अली नूर ने सोचा।

परन्तु किसी ने भी उसको न देखा। मन मसोसकर अली नूर घर वापिस आया। सब सुनकर प्रिय सखी ने कहा-"मैंने कहा था न?"

फिर वे घर की एक एक चीज़ बेचकर गुजारा करने लगे। जब चीज़े चली गई। और पैसा भी ख़तम हो गया तो अली नूर दुखी रहने लगा। उसके सामने रोजी का कोई रास्ता न था।

प्रिय सखी ने आसू बहाते हुए कहा- "सब चला गया है। आप इसपर क्यों दुखी होते हैं, अभी तो मैं आपकी ही हूँ। कभी बाजार में मेरी कीमत दस हज़ार दीनार थी। हो सकता है अब इससे अधिक कीमत मेरी हो। बाजार में मुझे बेचकर पैसा बना लीजिये।"

"प्रिय सखी! तुझे कैसे बेच दूँ? तेरे बगैर मैं एक घण्टा भी नहीं जीता रह सकता।" अली नूर ने कहा।



"मैं भी आपको छोड़कर नहीं जाना चाहती। परन्तु जरूरतें बड़ी जबर्दस्त हैं। वे हमसे जाने क्या क्या करवा सकती हैं। अगर आप मौजूदा हालत को सुधारना चाहते हैं तो यहीं एक रास्ता है।" प्रिय सखी ने कहा।

जब उसने यही बात कई बार कही तो उसने अपना कलेजा पत्थर कर, गुलामों को बेचनेवालों से बातचीत की। अपनी जरूरत के बारे में कहा।

"बाबू में आपका ही नौकर हूँ। जो कुछ मैं कर सकता हूँ, जरूर आपके

लिए करूँगा।" गुलामों को नीलाम करनेवाले ने कहा।

प्रिय सखी को, अली नूर के दिखाने पर, उसने उसे पहचान करके कहा-"अल्लाह जानते हैं मैं इनको इससे पहले भी बेच चुका हूँ। जितना अधिक इनके लिए मिल सकेगा उतना मैं दिलाने की कोशिश करूँगा।" वह चार पाँच और व्यापारियों को बुला लाया।

थोड़ी देर में एक झुण्ड तैयार हो गया। प्रिय सखी को एक जगह खड़ा करके नीलाम करनेवाला कहने लगा-"रईसो, आप इस सुन्दर स्त्री के लिए क्या दाम देंगे, बताइये।"

किसी ने कहा-"चार हजार दीनार।" उसके बाद-"पाँच सौ और बढ़ाओ।"

ठीक उसी समय वजीर सानवी घोड़े पर सबार हो उस तरफ से गुजरा। वह समझ गया कि कोई गुलाम बेची जा रही थी। थोड़ी दूर पर खड़े अली नूर को देखते ही उसने सोचा-"इस अभागे के पास और कुछ रहा नहीं, इसलिए अपने गुलाम ही बेच रहा है।" उसने प्रिय



सखी को देखकर उसके सौन्दर्य से अनुमान किया कि उसी से उसने शादी की होगी। सानवी ने तब तक "प्रिय सखी" को तो नहीं देखा था, पर हर किसी के मुख उसकी खूबसूरती की तारीफ सुनी थी। इतनी सुन्दर स्त्री को चौक में बिकता देख उसे भी लाखच हुआ।

तुरत सानवी ने नीलाम करनेवाले को बुलाकर कहा-"मैं इस गुलाम को खरीदूँगा। जहाँ तक इसकी बोली हुयी है, उस दाम पर मुझे ही दे दो।"

नीलाम करनेवाला कुछ न कह सका। सानवी बड़ा बजीर था, इसलिए उसके सामने कोई व्यापारी नीलाम में हिस्सा नहीं ले सकता था। नीलाम करनेवाले ने वजीर से कहा-"अच्छा, तो आपके नाम अभी यह गुलाम छोड़े देता हूँ।" कहकर वह अली नूर के पास गया। चुपचाप उसके कान में कहा- "आज आपकी किस्मत अच्छी नहीं है। यह दुष्ट इसका दाम तो बढ़ने नहीं देगा, जो चार हजार पाँच सौ देने के लिए कह रहा है, वह भी न



देगा, जाने कितनी बार आपको यह पैसा वसूल करने के लिए उसके घर के चक्कर काटने होंगे।"

अली नूर को बहुत गुस्सा आया। "अगर कोई रास्ता है तो बताओ।" उसने नीलाम करनेवाले से कहा।

"एक ही रास्ता है। आप यों दिखाइये कि जैसे गुलाम को दण्ड दिलवाने के लिए ही उसको चौक में नीलाम कर रहे हों। साफ साफ कह दीजिये कि आपका उसे बेचने का इरादा न था। आप उसे ले जाइये।" अली नूर से कहकर उसने प्रिय सखी को बजीर के पास ले जाकर कहा-

"हुजूर! इस गुलाम का मालिक आ रहा है। उससे आप तय कर लीजिये।"

इतने में अली नूर आया। उसने प्रिय सखी के गाल पर एक तमाचा मारा। "क्यों बे दासी! अब तो अक्ल आई। चल अब! अगर फिर कभी मेरी बात न मानी तो सचमुच तुझे बेच दूँगा।"

वजीर हैरान रह गया। "यह क्या? मैंने इसे खरीदा है। यह मेरी हैं।" उसने कहा।

"मैंने बेची नहीं तो तुमने खरीदी कैसे? चल चल!" अली नूर ने कहा।

"अच्छा, तो आप ही बताइये। यह गुलाम स्त्री मेरी है कि नहीं?" कहते हुए वजीर ने प्रिय सखी का हाथ पकड़ लिया।

वजीर का यह ख्याल था कि आस पासवाले, उसको वजीर जानकर उसका ही समर्थन करेंगे। परन्तु वे अली नूर को ही अधिक चाहते थे। किसी ने भी वजीर का समर्थन न किया। यह देख, अली नूर ने वजीर के पेट में घूँसा मारते हुये कहा-"जा बे कुत्ते! मेरी चीज़ हड़पने की सोच रहे थे। जा, बे जा, जहाँ चाहे शिकायत कर ले।" उसने उतने बड़े वजीर की मरम्मत कर दी। प्रिय सखी को साथ लेकर वह घर चला गया। वजीर के साथ के गुलामों ने तलवार लेकर अली नूर पर हमला तो करना चाहा पर वहाँ खड़े लोगों ने उनकी एक न चलने दी।

वजीर की नाक से खून बह रहा था। वह धूल में गिर गया था। वह जैसे तैसे उठा और सुल्तान से शिकायत करने निकला। लोग उसको देखकर बुरी तरह हँस रहे थे, इतने दिनों बाद उस अत्याचारी की अली नूर ने खबर ली थी, इसलिए सब उसकी वाह वाह करने लगे।





दण्डकारण्य में गोदावरी नदी के किनारे, योगानन्द नाम के एक सिद्ध पुरुष कुटिया बनाकर रहा करते थे। योग की शिक्षा पाने के लिए उनके पास हर जाति के विद्यार्थी उनकी सेवा शुश्रूषा किया करते थे। वे विद्यार्थियों को एक वर्ष तक परखते और यदि वे उनको योग्य समझते तो अपने पास रखते; वरना उनको उनके घर वापिस भेज दिया करते।

योगानन्द अपने आश्रम को छोड़ कर कभी कभी जङ्गल में कहीं कहीं शिष्यों को लेकर जाया करते थे। तब उनके शिष्य नई बातें सीखते, अनेक स्थल देवताओं का परिचय पाते। कई तरह के ब्रह्म राक्षसों को वश में करने का प्रयत्न किया करते।

एक साल योगानन्द के पास, घीरसिंह नाम का क्षत्रिय लड़का शिष्य होकर भाया। वह छोटा था, मगर कई युद्धों में भाग ले चुका था। भय किस चीज को कहते हैं, वह न जानता था। सबकी तरह उसकी भी वर्ष भर तक परीक्षा ली जा रही थी। एक साल खतम होने को था।

उस समय योगानन्द अपने शिष्यों के साथ एक झील के पास पहुँचे। झील के पास एक कुटिया बनाई गई। उस झील से कुछ दूरी पर एक बड़ा बरगद का पेड़ था। उसकी टहनियाँ, जड़ें सौ एकड़ों में फैली हुयी थीं।

झील के पास पहुँचने पर उस दिन रात को योगानन्द ने अपने शिष्यों से कहा-"यह बरगद का पेड़ बहुत पुराना है। इस पर त्रेतायुग के भी पिशाच हैं। उनके बारे में बाद में बताऊँगा। पर आज रात उसके पास कोई न जाये। यह मेरी आज्ञा है।"



सब भोजन करके सो गये। सब के साथ धीरसिंह भी सो गया। पर आधी रात के करीब उसकी नींद टूट गई और फिर उसे नींद न आई। आश्रम से बाहर आ कर उसने कुछ दूरी पर पिशाचों वाला बरगद का पेड़ देखा। क्योंकि वह कभी डरा न था इसलिए उसने उस पेड़ के नीचे जाकर देखना चाहा। गुरु के बताने से पहले ही स्वयं उस पेड़ के बारे में जानने की उसे इच्छा हुई। वह चल दिया।

कुछ दूर जाने पर उसको एक जड़ से कोई सफेद चीज़ उतरती दिखाई दी। उसके जमीन पर उतरते ही धीरसिंह ने गम्भीर आवाज में पूछा- "तुम कौन हो?"

"मेरा नाम अनुकम्पन है। मैं वही हूँ, जिसने रावण को बताया था कि इस वन में राम की पत्नी सीता है।" जड़ से उतरे हुए व्यक्ति ने कहा।

धीरसिंह हैरान न हुआ। "तो तुम अब भी यहीं रह रहे हो?" उसने अनुकम्पन से पूछा।

"आम तौर पर नरक में रहा करता हूँ। जब वे आने देते हैं तो इस पेड़ पर आकर रहने लगता हूँ।" पास आते हुए अनुकम्पन ने कहा।

"ओहो, नरक में तुम लोगों का क्या हालचाल है?" धीरसिंह ने अनुकम्पन से पूछा। वह देख रहा था कि अनुकम्पन धीमे धीमे उसके पास सरक रहा था।

"क्या बताऊँ उनका क्या हालचाल है? नरक की ज्वालाओं में जल जला कर तड़प रहे हैं।" अनुकम्पन ने कहा।

"नरक की यातनाओं को कौन सबसे अच्छी तरह सह रहा है?" धीरसिंह ने जानना चाहा।

"हम सब से रावण की हालत ही अच्छी है।" अनुकम्पन ने कहा।

"रावण को क्या दण्ड़ दिया गया?" धीर सिंह ने पूछा।

"तेल के कड़ाहों को गरम करने के लिए कहा गया है।"

"वह तो कोई खास कठिन काम नहीं है।"

"कड़ाहों के नीचे स्वयं रावण जल रहा है।"

"हाँ! तो यह कहो, वह तो सचमुच बड़ी यातना है। हाँ तो कौन ऐसा है जो नरक की यातना बिल्कुल नहीं सह पा रहा है?" धीर सिंह ने पूछा। वह देखता जा रहा था कि बिना रुके अनुकम्पन उसके पास आता जा रहा था।

"कुम्भकर्ण बिल्कुल नहीं सह रहा है। रात दिन वह कराहता रहता है और किसी को सोने नहीं देता।" अनुकम्पन ने कहा।

"कुम्भकर्ण को क्या सजा दी गई है?"

"एड़ियों तक आग लगा दी है।"

"क्या वह इसी वजह से रो-चिल्ला रहा है?"



"आग में उसे सिर नीचा करके लटका दिया गया है।"

"तो यों कहो। यह सचमुच बड़ा कष्टदायक है। क्या तुम बता सकते हो कुम्भकर्ण कैसे रो-चिल्ला रहा है?" धीरसिंह ने पूछा।

"हाँ जरूर।" कहते हुए अनुकम्पन ने जोर से गर्जन किया, ऐसा गर्जन कि कान फूट जायें। धीरसिंह को अपने कान जोर से बन्द करने पड़े।

"बस इतना ही। यह तो भेड़ के मिमियाने के बराबर है। शायद कुम्भकर्ण

की तरह चिल्लाना तुम्हारे बस की बात नहीं है।" धीरसिंह ने पूछा।

"तो इस बार सुनो।" अनुकम्पन फिर चिल्लाया। इस बार ऐसा लगा जैसे भूमि को कँपकपी हो गई हो। धीरसिंह ने यद्यपि अपने कान जोर से बन्द कर लिए थे तो भी उसका सिर चकरा गया।

"बस इतना ही, यह तो घोड़े के हिनहिनाने के बराबर भी नहीं है। कुम्भकर्ण तो हमसे अधिक जोर से चिल्ला रहा होगा। तुम यह दिखा नहीं पा रहे हो।" उसने कहा।

"तो इस बार सुनो।" अनुकम्पन ने एक बार जोर से लम्बा साँस लिया फिर वह पूरे जोर से चिल्लाया। धीरसिंह के जोर से कान बन्द करने पर भी कोई फायदा नहीं हुआ।

वह उसके गर्जन को सुनकर बेहोश-सा हो गया।

यह मौका देख अनुकम्पन ने उसको निगलने के लिए एक कदम आगे रखा। परन्तु इस बीच, अनुकम्पन का चिल्लाना सुन योगानन्द आश्रम से भागे भागे आये। अपने कमण्डल से जल लेकर उन्होंने अनुकम्पन पर छिड़का। जल गिरना था कि अनुकम्पन भूमि में घुसकर पाताल में भाग गया।

फिर योगानन्द धीरसिंह को आश्रम ले गये। उससे सारी बात मालूम की। उन्होंने कहा-"बेटा, यद्यपि तूने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया है तो भी मैं तेरे शक्ति साहस की प्रशंसा करता हूँ। तू आज से अपना नाम धीरानन्द रख। और मेरा शिष्य बन।" योगानन्द ने उसको योग की शिक्षा दी।





[९]

[सूर्य भगवान के पशुओं के खाने के अपराध में रूपधर के अनुचर नौका के साथ समुद्र में समा गये। रूपधर अकेला एक किनारे पर पहुँचा। वहाँ उसको उस देश की राजकुमारी वारुणी दिखाई दी। उसकी सहायता से उसको राजभवन में आश्रय मिला। राजा महामेधी ने उसको सहायता देना का वचन दिया। उस दिन रूपधर रात को आराम से सो गया।]

प्रातःकाल होने पर महामेधी के साथ रूपधर भी नींद से उठा। दोनों मिलकर दरबार में गये। यह दरबार भवन बन्दरगाह के पास था। उसमें पत्थर से बने हुये आसन थे। महामेघी एक आसन पर बैठ गया और उसने रूपधर को अपने पास बैठने को कहा। इस बीच राजा का एक सैनिक रूपधर की यात्रा का प्रबन्ध करने के लिए शहर में गया। उसने बड़े बड़े प्रतिष्ठित लोगों को एक एक कर दरबार भवन में निमन्त्रित किया और बताया कि कोई अद्भुत व्यक्ति राजा का अतिथि होकर आया हुआ था।

इस अद्भुत नये व्यक्ति को देखने के लिए ही प्रतिष्ठित लोग तुरन्त निकले। शीघ्र दरबार भवन में सब आसन भर



गये। वहाँ निमन्त्रित लोगों से राजा ने इस प्रकार कहा-

"सज्जनो! मेरे पास बैठा व्यक्ति मेरा अतिथि होकर आया है। वह कौन है, मैं नहीं जानता हूँ। पूर्व से आया है या पश्चिम से, यह भी मैं नहीं जानता हूँ। उसने अपनी यात्रा के लिए मुझसे सहायता माँगी है, इस पर मुझे कोई आपति नहीं है। क्योंकि मेरा कोई ऐसा अतिथि नहीं है, जो मेरे घर आया हो और असन्तुष्ट लौटा हो। इसलिये हमें अपनी परम्परा के अनुसार इस व्यक्ति की आवश्यक सहायता करनी चाहिये। हम इसको एक नई नौका और बावन चप्पू चलानेवाले आदमी देंगे। जो चप्पू चलाने में अच्छे हो, वे नौकाएँ अपनी जगह ठीक करके हमारे घर भोजन के लिए आयें। आप सब भी हमारे यहाँ दावत में पधारें। दावत का प्रवन्ध बड़े पैमाने पर करूँगा। दावत के समय, गाना सुनाने के लिए किसी अच्छे गवैये को लाइये।"

महामेधी महाराज यह कह कर रूपधर को साथ लेकर, अपने महल गया। तुरन्त गवैये को खबर पहुँची। बावन, ताकतवर चप्पू चलानेवालों ने नई नौका को पानी में रख कर, चप्पू ठीक किये, एक सफेद पाल चढ़ाया। नौका को गहरे पानी में ले जाकर लङ्गर डालकर, वे राजमहल गये।

राजमहल के कमरे, भवन, बरान्दे, सब लोगों से खचाखच भरे हुये थे। दावत के लिए भेड़ों, जङ्गली सूअरों और बैलों को काटा गया। दावत के समय गाने के लिए एक अन्धे गवैये को बुलाया गया। जब सब भोजन के लिए बैठ गये, तो उस गवैये ने एक गीत गया। गीत में वर्णित घटना ऐसी थी, जो

रूपधर के जीवन में गुजर चुकी थी। वह घटना यह थी।

ट्रोय युद्ध अभी शुरू न हुआ था। राजा भविष्य के बारे में जानने के लिए मैधो के पास सूर्यालय में गया। "ट्रॉय के पतन से पहले तेरे सैनिकों में परस्पर कलह होगा।" सूर्य भगवान ने राजा को बताया। हुआ भी ऐसा ही। एक दिन भोजन के समय रूपधर और वज्रकाय में झगड़ा हुआ। दोनों में तू तू मैं मैं हुई। राजा को, इस झगड़े के बारे में जानकर खेद होना तो अलग बहुत सन्तोष हुआ क्योंकि सूर्य भगवान ने उसे पहले ही बता दिया था कि यह झगड़ा उसके लिए लाभकारी था।

अन्धे गायक ने इस घटना का वर्णन करते हुये गीत बनाकर गाया था। परन्तु यह गीत सुनकर, रूपधर को दुख होने भी लगा। कहीं ऐसा न हो कि दूसरे उसके आँसू देखें, उसने कपड़े के एक छोर से अपना मुँह ढक लिया। बीच बीच में जब गायक अपना गान बन्द करता तो रूपधर आसू पोछ लेता। उसके फिर गान शुरू करते ही अश्रु धारा बहने लगती और वह अपना मुँह ढक लेता।



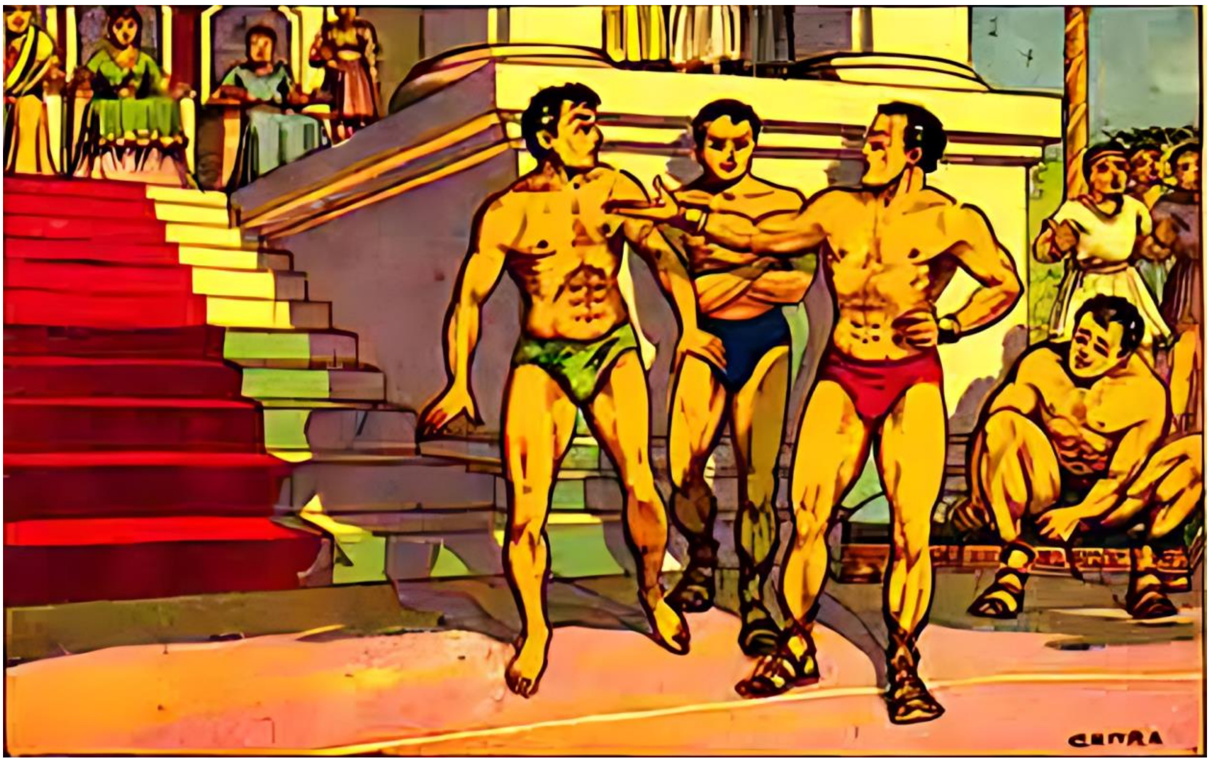
दूसरों ने रूपधर की हरकतों को देखा नहीं; पर महामेधी ने देखा। वह उसके पास बैठा ही भोजन कर रहा था। उसने दुख के कारण रूपधर का आहे भरना सुना।

अन्त में महामेषी ने अपने अतिथियों से कहा-"मित्रो, हमने पेट भर भोजन कर लिया है। अब हम इस गान को समाप्त कर, व्यायाम प्रदर्शन देखें। अतिथि जब देखेंगे कि मल्लयुद्ध और कूद में हमारे लोग कितने प्रवीण हैं, तब वे अपने देशवासियों को भी इस बारे में कह सकेंगे।"

राजा के उठते ही और भी उठकर मैदान में गये। वहाँ हजारों आदमी जमा थे। व्यायाम कीड़ा में प्रवीण युवक प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए तैयार थे।

पहले दौड़ हुई। फिर मल्लयुद्ध। फिर कूद। फिर गोला फेंकना आदि हुये। हर प्रतियोगिता में एक एक युवक जीता। मल्लयुद्ध में राजा के लड़के की जीत हुई। उसने अपने अनुचरों से कहा-"अरे हमारे अतिथि ने छुटपन में किन किन व्यायामों का अभ्यास किया था, आओ, मालूम करें। वे देखने में तो हट्टे कट्टे मालूम होते हैं। जाँघे, गला, वगैरह सब मजबूत हो दीख पड़ते हैं। हाथ भी बलवान हैं। उम्र भी अधिक नहीं लगती।

राजकुमार से उसके मित्रों ने कहा-"शाबाश, तो तू ही जाकर उनसे मिल, बाजी के लिए ललकार।" उसने रूपधर के पास जाकर कहा-"अगर आप व्यायाम आदि जानते हो तो आइये, कौशल दिखाइये। हरेक कोई न कोई व्यायाम पसन्द करता है। आपको निरुत्साहित नहीं होना चाहिये। आपके लिए नौका, नाबिक भी तैयार हैं।"

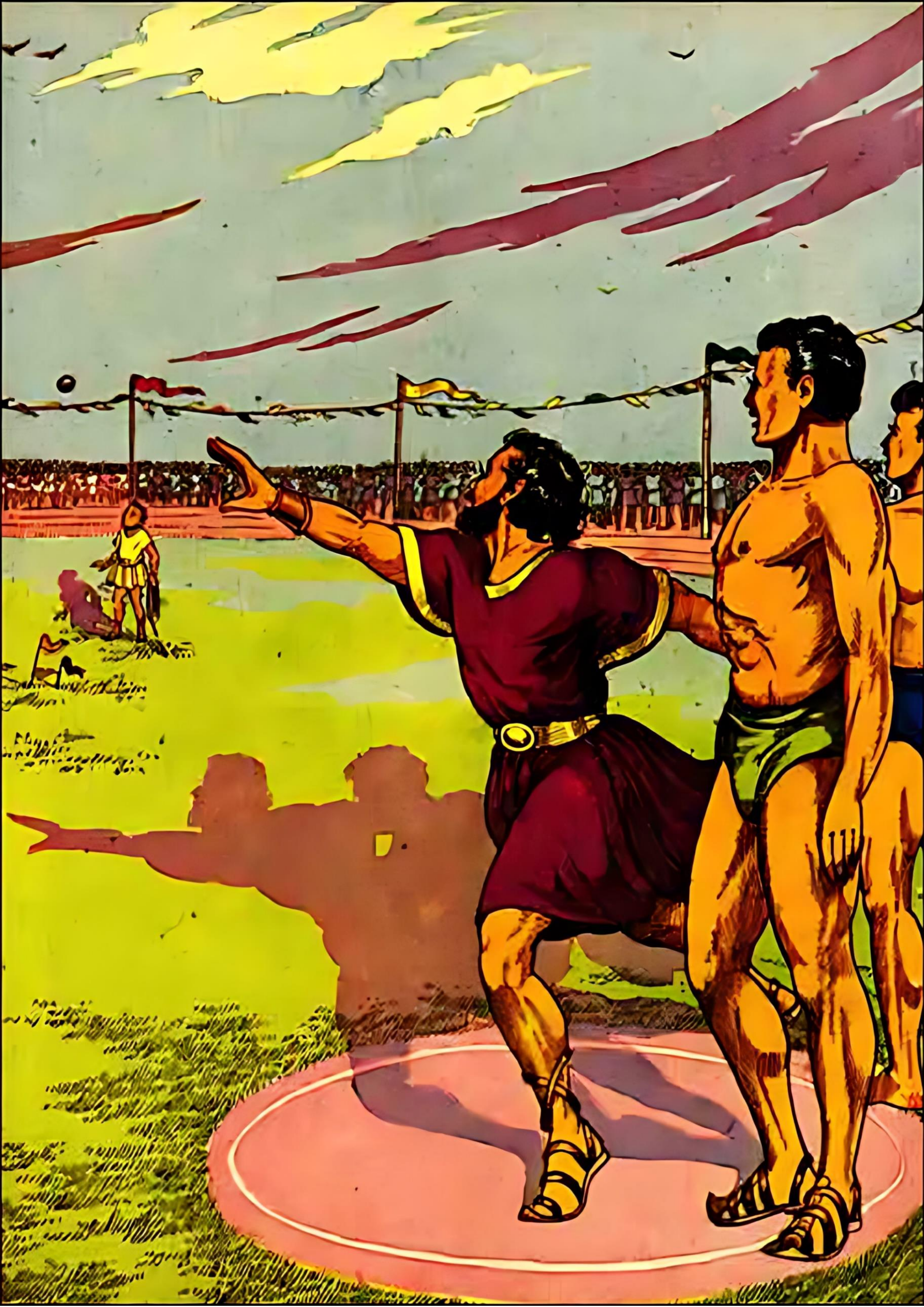


"बेटा! तुम यह क्या कह रहे हो? लगता है तुम सब हमारा मजाक कर रहे हो। आजकल तो मेरे मन में सिवाय कष्टों के, मनोरञ्जन की कोई बात ही नहीं। में आपके अतिथि के रूप में इस सब मनोरञ्जन को देख तो रहा हूँ; पर देखकर खुश नहीं हो रहा हूँ। मैं तो सिर्फ यही चाहता हूँ कि जल्दी से जल्दी घर पहुँच जाऊँ।" रूपधर ने कहा।

उसको उकसाने के लिये एक और युवक ने रूपधर से कहा-"खैर, आपको तो देख कर भी यह लगता है कि आपको ये चीजें आती जाती नहीं हैं। आप तो ऐसे लगते हैं, जैसे किसी व्यापारी नौका को चलाना, माल ढोना उतारना, हिसाब रखना, लाभ पाना आदि ही जानते हो।"

रूपधर को सचमुच गुस्सा आ गया। उसने भौंहें सिकोड़ कर कहा-"भाई, कई को भगवान बहुत बदसूरत बनाते हैं। पर जब वे मुख खोलते हैं तो मोतियाँ झरती हैं। उनकी बातें सुनने के लिए लोगों का जमघट तैयार हो जाता है। और कई देखने में तो बहुत खूबसूरत होते हैं पर जब वे मुख खोलते हैं तो सब को

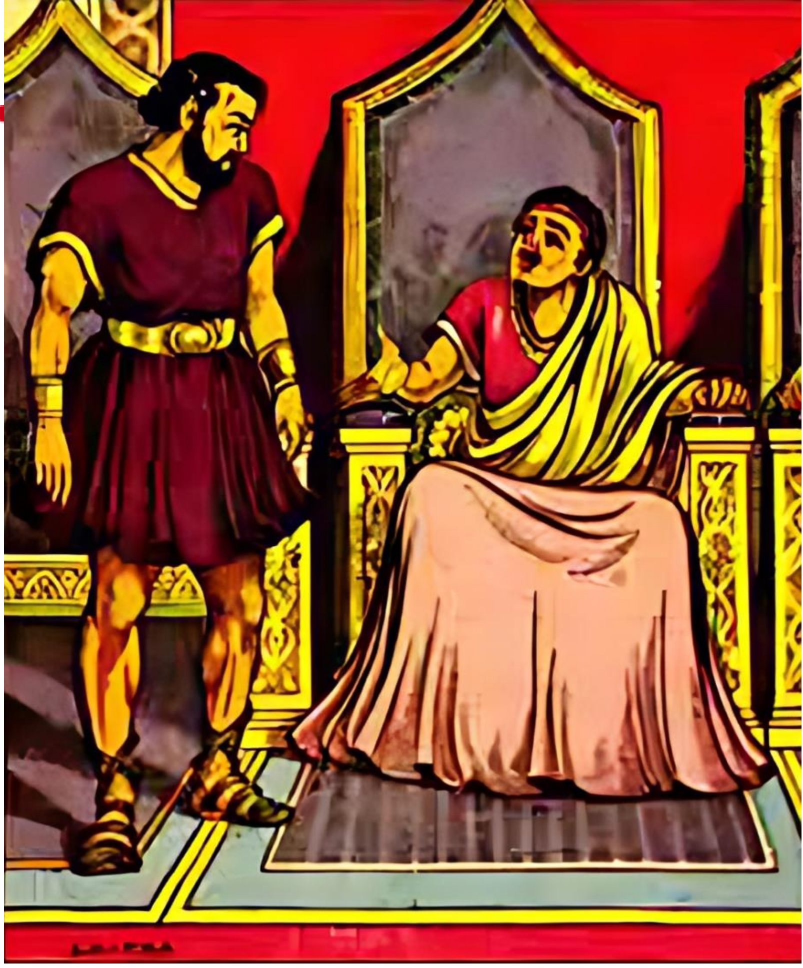




कान बन्द कर लेने पड़ते हैं। भगवान ने तुम्हें सौन्दर्य दिया है पर बुद्धि नहीं दी है। मैं कष्टों के कारण बहुत कमजोर हो गया हूँ। फिर भी मुझ में जो शक्ति है, वह दिखाऊँगा।" कहता हुआ वह उठा। उसने एक बड़ा पत्थर का गोला उठाया, और उसको सिर के चारों ओर घुमाकर, दूर फेंक दिया।

फासला नापनेवाले ने वह जगह नापी, जहाँ गोला गिरा था। "आपने सबकी अपेक्षा अधिक दूर गोला फेंका है। इतनी दूर और कोई नहीं फेंक सकता है। आप निश्चिन्त रहिये।"

रूपधर को यह सुनकर आनन्द हुआ फिर उसने उत्साहपूर्वक कहा-"अरे भाई! अगर दम हो तो गोला फेंकने में तुम भी दो चार हाथ दिखाओ में उतरा न था। जब उतरा ही हूँ तो पीछे नहीं हटूँगा। कुश्ती में, दौड़ में, जिस किसी बात में चाहो मुकाबला कर सकते हो। मैं बाण विद्या भी जानता हूँ। युद्ध में इस विद्या में मुझसे बढ़कर धनुधव ही अकेला था। देवताओं के बारे में तो हम नहीं जानते हैं पर, आदमियों



में चाहे वह कोई भी हो, मैं मुकाबला करने के लिए तैयार हूँ।"

किसी ने कुछ न कहा ।

महाभेधी ने रूपधर की ओर मुड़कर कहा:-

"अगर कोई आपका तिरस्कार करे तो अपनी बड़ाई स्वयं करने में कोई खराबी नहीं है। आपकी शक्ति में सन्देह करने योग्य यहाँ कोई नहीं है। आपको तो सिर्फ यह चाहिये कि यहाँ थोड़ा मनोरञ्जन कर लें और चले जायें। कई कीड़ाओं में हम कम हैं। मल्लयुद्ध और बाकी क्रीड़ाओं में

हमें न काफी शिक्षा मिली है, न अभ्यास ही है। हम जानते हैं नौकायें बनाना, उनको चलाना, गाना, नाचना। हम चाहते हैं कि आप इनका आनन्द लें। और घर पहुँचकर हमें याद कर सकें।"

फिर नृत्य और गान का कार्यक्रम चला।

उस देश के नृत्य और गान को देखकर रूपधर को आश्चर्य हुआ। उसने महामेधी से कहा-"महाराज ! इतने सुन्दर नृत्य मैने कहीं नहीं देखे हैं।"

उसके अतिथि के यह कहने पर राजा बहुत खुश हुआ। उसने उस देश के बारह राजकुमारों को बुलवाकर, उनसे अतिथि को अच्छी अच्छी पोषाकें, व सोना पुरस्कार में दिलवाया। रूपधर को जिसने चिढ़ाया था, उसने उसे कई चीजें भेंट में दीं।

उस दिन रात को भोजन के समय अन्धगायक ने "काठ के घोड़े की कहानी" गाकर सुनाई। कथा, ग्रीकों के शिविर जला कर अपनी नौकाओं के चले जाने के साथ आरम्भ हुई। जब ट्रोजनों का काठ के घोड़े को अन्दर ले जाना का वर्णन होने लगा तो रूपधर उसे सुनते सुनते आँसू बहाने लगा।

यह देख महामेधी ने गायक को गाना बन्द करने का सङ्केत किया। रूपधर की और मुड़कर उन्होंने पूछा-"आप बिना छुपाये यह बताइये कि आप कौन हैं? आपका नाम क्या है? ग्राम क्या है? आपका कौन-सा देश है? आप कहाँ से आ रहे हैं? ट्रोय युद्ध की कथा सुनने पर आप क्यों दुःखी हो जाते हैं? कहीं आपका कोई निकट सम्बन्धी उसमें मारा तो नहीं गया है?"

(क्रमशः)





[७]

[राजकुमारी बुदूर का मन्त्री के लड़के से विवाह, अलादीन ने बिना किसी के जाने रद्द करवा दिया। राजा की दी हुई अवधि के समाप्त होते ही उसने अपनी माँ द्वारा खबर भिजवाई कि राजकुमारी का उसके साथ विवाह किया जाय। मन्त्री की सलाह पर राजा ने अपनी लड़की के लिए बहुत से रत्नों का दहेज माँगा। दीप के भूत की सहायता से अलादीन ने दहेज भेज दिया। फिर राजा ने अलादीन को बुलाकर उसका स्वागत किया।]

दरबार भवन में राजा और अलादीन के भोजन का प्रबन्ध किया गया। मन्त्री ने स्वयं उनको भोजन परोसा। और दरबारी भी वहाँ उपस्थित थे।

भोजन के समाप्त होते ही राजा ने पुरोहित आदियों को बुलाकर अपनी लड़की का विवाह अलादीन के साथ निश्चित किया।

फिर उसने अलादीन से पूछा-"क्यों बेटा, कब विवाह का मुहूर्त तय किया जाय? तुम्हारी क्या राय है?"

"महाराज! मुहूर्त जब कभी चाहें आप निश्चित करें, वह मुझे स्वीकृत होगा। किन्तु मैं, हम दोनों के रहने के लिए एक सुन्दर महल बनवाने की फिक्र में हूँ। उस महल के तैयार होते ही मैं विवाह कर लूँगा।" अलादीन ने कहा।



"यह महल कहाँ बनवाओगे?" राजा ने पूछा।

"अगर आपकी अनुमति मिले तो ठीक आपके राजमहल के सामने ही। आप तो यही चाहते होंगे कि आपकी लड़की आपके जितना पास रहे उतना अच्छा। मैं भी आपके दर्शन अक्सर कर सकूँगा।" अलादीन ने कहा।

"इसके लिए मेरी अनुमति लेने की क्या जरूरत है, जहाँ तुम चाहो, वहाँ बना लो। पर यह ख़्याल रहे कि यह काम जल्दी खतम हो जाय। मैं उतावला हो रहा हूँ कि कब मेरी लड़की शादी करती है। और कब मैं पोते-पोतियों से खेलता हूँ।" राजा ने कहा।

अलादीन यह सुन मुस्कराया। वह राजा से आज्ञा लेकर अपने घर चला गया। घर पहुँचते ही उसने अपनी माँ से सारी बातें कहीं। वह फिर अपने कमरे में चला गया। किवाड़ बन्द कर दिये। एकान्त में दीप रगड़ कर उसने भूत को तुरन्त बुलाया। भूत ने आकर पूछा-"क्या आज्ञा है?"

"मेरी इच्छाओं को पूरी करने में तुम बहुत चुम्ती दिखा रहे हो। इस बार और चुस्ती दिखानी होगी। मेरे और मेरी पत्नी के रहने के लिए राजमहल के सामने एक सुन्दर, अच्छा राजमहल बनवाना होगा। उसके निर्माण का भार सब तुम पर ही छोड़ देता हूँ। कहाँ कहाँ क्या क्या रत्न लगाने हैं, यह भी तुम ही देख लो। परन्तु महल के बीचों बीच एक बड़ा स्फटिक का बुर्ज होना चाहिये, उसके खम्भों पर सोने चान्दी का पलस्तर होना चाहिये। उस बुर्ज में निन्यानवें खिड़कियाँ होनी चाहिये। उन पर वज्र, रत्न आदि जड़े जाने चाहिए। पर निन्यानवीं खिड़की को खाली छोड़

दो, उसपर रत्न आदि न रखो। महल के सामने फवारा बनाओ, नहरों का इन्तज़ाम करके सुन्दर उद्यान तैयार करो। राजमहल के नीचे एक तहखाना बनाओ और उसमें सोने के जेवर जवाहरात रखो। रसोई, अस्तबल, गुलामों की रहने की जगह, जैसे तुम चाहो वैसे बनाओ। काम खतम होते ही मुझे बताओ।" अलादीन ने दीप के भूत से कहा।

"जो आपकी आज्ञा।" कहकर भूत चला गया।

अगले दिन सवेरे के समय, भूत ने सोते अलादीन को उठाकर कहा-"आपका महल ख़तम हो गया है, आकर देखिये।" जब वह मान गया तो भूत उसको पीठ पर चढ़ाकर ले गया। उसको उसने नया महल दिखाया। यह महल, राजमहल के सामने था और उससे कई गुना अधिक सुन्दर था। इस महल में जाने के लिए दो सङ्गमरमर के रास्ते थे। महल को बाहर से देखने के बाद अलादीन भूत को लेकर अन्दर का हिस्सा देखने गया। महल में उसे ऐसा ऐश्वर्य-वैभव दिखाई दिया, जिसकी उसने कभी कल्पना



भी न की थी। महल के नीचे एक बहुत बड़ा धनागार था। सोने चान्दी से भरे बोरे थे। राजमहल की तरह, उसमें रसोई घर, अस्तबल, दासियाँ वगैरह सब कुछ थे। अस्तबल में अच्छी नस्ल के घोड़े थे। साईस उनकी मालिश कर रहे थे। उनके दाना-पानी के लिए चान्दी के नांद थे।

अलादीन बड़ा खुश हुआ। उसने भूत की ओर मुड़कर कहा-"तुम एक बात भूल गये हो, मेरी पत्नी के लिए मेरे घर से राजमहल जाने के लिए एक लम्बी कालीन दोनों महलों के बीच बिछाओ।"

"जो आपकी आज्ञा।" भूत ने कहा। तुरन्त महलों के बीच एक मुलायम कालीन बिछा दी गई।

"अब कोई कमी नहीं है, अब हमें हमारे घर ले जाओ।" अलादीन ने भूत से कहा।

उसके चले जाने के कुछ देर बाद, राजमहल को ड्योढ़ी के फाटक खोले गये। राजा के नौकर चाकर, अपना अपना काम छोड़कर राजमहल के बाहर आकर सामने बने नये महल को देखकर चकित हुए। यह महल मोती मणियों के कारण नवोदित सूर्य ही तरह चमक रहा था।

उन लोगों ने जाकर यह बात महामन्त्री से कही। उसने जाकर राजा से कहा-"महाराज, जो राजकुमारी से शादी करने जा रहा है, लगता है, वह जादू जानता है। आश्चर्य की बात है "

"तुम कतई मूर्ख लगते हो। ईर्ष्या के कारण तुम्हारी बुद्धि विपरीत हो गई है। उतना बड़ा रईस अगर चाहे तो क्या एक रात में इतना बड़ा महल तैयार नहीं करवा सकता है?" राजा पूछा।

मन्त्री जान गया कि राजा का पूरा अनुग्रह अलादीन पर था। इसलिए



चाहे वह कुछ भी कहे, वह न सुनेगा। वह चुप हो गया।

इस बीच अलादीन ने घर पहुँचकर, अपनी माँ को जगाया और उससे अच्छी पोषाक पहनवाई। जब वह जाने के लिए तैयार हो गई तो उसने कहा-"माँ! अब तुम बहू को अपने घर ला सकती हो। आ, चल चलें।"

अलादीन की माँ अपनी बारह सेविकाओं को साथ लेकर राजमहल की ओर निकली। उसके थोड़ी दूर पीछे अलादीन घोड़े पर सवार होकर निकला। उसके साथ उसके नौकर-चाकर भी थे। उसकी माँ राजमहल में घुसी।

राजा ने उनका स्वागत किया और नौकरों के साथ जनाने में भेजा। राजकुमारी ने उसको देखते ही विनयपूर्वक उसको एक जगह बिठाया, फल आदि दिये और स्वयं जाकर साज-श्रृङ्गार करने लगी।

दासियों ने राजकुमारी को दुल्हन बनाया। उसके पास जितने जेवर थे, सब लगाये। थोड़ी देर में राजा भी आया। आदर आवभगत देखकर, अलादीन की माँ आनन्दाश्रु बहाने लगी। जब वे





तीनों बातें कर रहे थे तो रानी भी आई। उसने अलादीन की माँ से कुछ न कहा। उनकी बातचीत में भी हिस्सा न लिया। रानी को यह शादी बिल्कुल पसन्द न थी। उसे यह जानकर दुःख हो रहा था कि उसका दामाद प्रसिद्ध न था। समृद्ध न था। अलादीन के विषय में वह मन्त्री से सहमत थी। पर यह जानकर कि राजा उसी पर ही न खौल उठे उसने कुछ न कहा।

राजकुमारी जब ससुराल जाने लगी तो अपने माँ-बाप का आलिङ्गन कर रोने लगी। फिर वह ससुराल के लिए निकली। उसके साथ दस नौकर और सौ दासियाँ भी गई। चार सौ गुलाम दोनों महलों के बीच में खड़े थे। उनके हाथों में बड़े-बड़े थाल थे, उनपर कपूर, धूप बत्तियाँ जल रही थी। मङ्गल बाद्यों के साथ धीमे धीमे कदम रखती कालीन पर मायके से ससुराल गई। यह दृश्य देखने के लिए लोग जमा हो गये और वे हर्ष के कारण करतल ध्वनि करने लगे।

अलादीन मुस्कराता अगवानी करने आया। वह उसको अन्दर ले गया। बुर्ज के नीचे के रत्नोंवाले भवन में अलादीन, और राजकुमारी दावत खाने बैठे। वहाँ का वातावरण देखकर राजकुमारी हैरान रह गई। उसने कभी सपना भी न देखा था कि कभी वह ऐसी जगह भी कदम रखेगी।

भोजन के बाद स्त्रियों ने आकर नृत्य किया। वह नृत्य राजकुमारी को ऐसा लगा, जैसे कोई स्वर्ग का नृत्य हो। वैसा नृत्य उसने कभी न देखा था।

अगले दिन सवेरे, अलादीन अपने घोड़े पर सवार होकर राजमहल में गया। उसने राजा को अपने घर न्योता दिया। राजा

ने उसका न्योता सन्तोषपूर्वक स्वीकार किया-"बेटी कैसी है?" उसने पूछा। अलादीन ने उचित उत्तर दिया। राजा ने अच्छी पोषाक पहनी और फिर दोनों मिलकर अलादीन के घर गये।

राजा तो उस महल को बाहर से ही देखकर हैरान था, अब जब उसने उसको अन्दर से देखा तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उसको सब से अच्छा बुर्ज के पास का हॉल लगा। उसने सब कुछ गौर से देखा। फिर कहा-"मैं नहीं सोचता कि इस संसार में इस जैसा महल कहीं और है? अलादीन! क्यों यहाँ एक खिड़की पर रत्न नहीं जड़वाये हैं और खिड़कियों के सामने यह नङ्गी-सी लगती है। क्या बात है?

"आप यह नहीं सोचें कि असावधानी या कंजूसी के कारण उसे यो छोड़ दिया है। आज से यह महल आपकी लड़की का है। इसलिये इसके निर्माण में थोड़ा आपका भी हिस्सा हो, यह सोचकर उसे यों ही छोड़ दिया है। यह काम आप करवाकर कीर्ति पाइये।" अलादीन ने कहा।



"सचमुच तुम्हारा ख्याल बहुत सुन्दर है। यह काम मुझे छोड़ दो।" कहकर, राजा ने अपने सैनिकों को बुलाकर कहा-"अरे, हमारे कारीगरों को बुलाओ।"

उसके बाद वह अपनी लड़की से बातें करने गया। उसने उससे मालूम किया कि वह नया जीवन उसके लिए बड़ा आनन्ददायक था। फिर उसने अपने दामाद और लड़की के साथ भोजन किया।

इतने में कारीगर आ गये। राजा ने उन्हें खिड़की दिखाकर कहा- "इसको

भी और खिड़कियों की तरह सजाओ।"

"अच्छा हुज़ूर।" शिल्पियों ने कहा। उन्होंने जाकर और खिड़कियाँ देखीं, फिर महाराज के पास आकर कहा-"माफ़ कीजिये! हमारे पास जितने रत्न हैं उन सब को मिलाकर भी हम इस खिड़की के सौवें हिस्से को भी अलंकृत न कर सकेंगे। क्या किया जाय?"

राजा ने अपने सैनिकों को भेजकर वे सब रत्न मँगाये जो अलादीन ने उसको भेंट में दिये थे। उनको शिल्पियों को दिखाकर कहा-"इनमें से जितने तुम उपयोग करना चाहो, ले लो, बाकी मुझे दे दो।"

उन्होंने उनको नाप तोलकर कहा-"महाराज, इनके मिलाने पर भी खिड़की का दसवाँ हिस्सा ही पूरा हो सकेगा।" राजा थोड़ा घबराया। फिर उसने अपने सैनिकों को बुलाकर कहा-"हमारे मन्त्री, सामन्तों के पास जितने रत्न हो, उन सब को बटोर कर लाओ।"

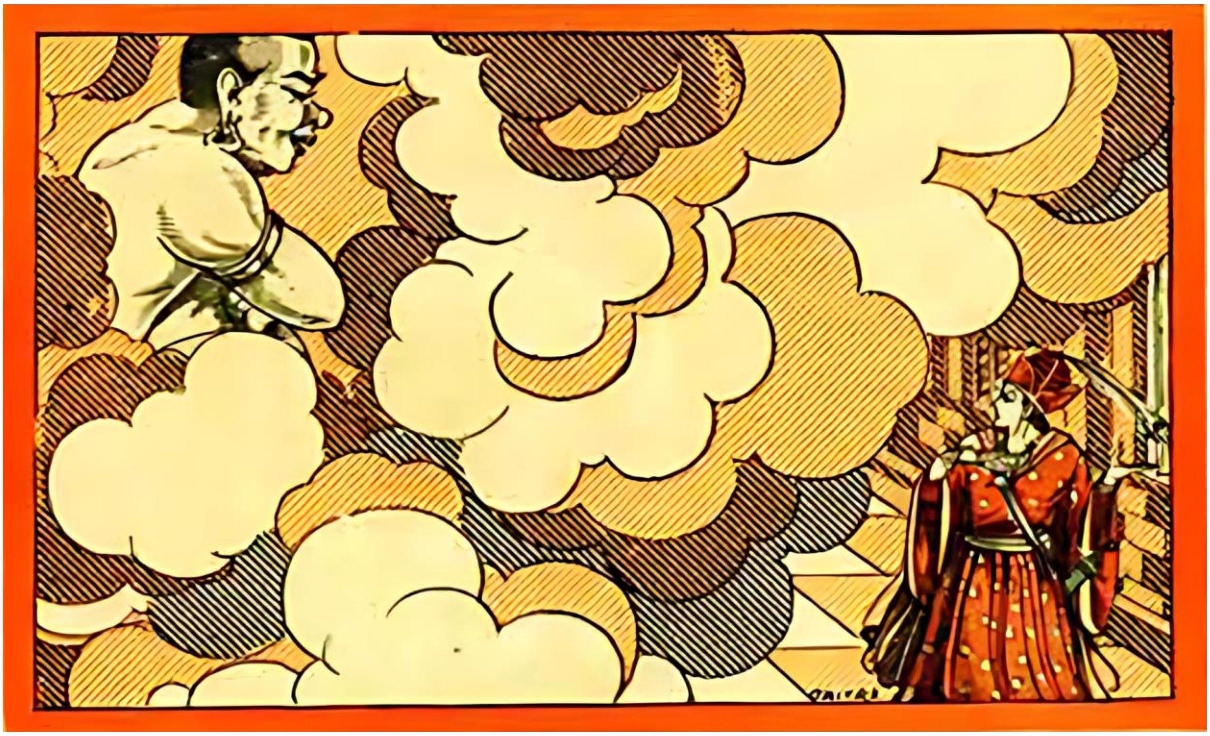
सैनिक जाकर सबके पास से रत्न जमा कर लाये। कारीगरों ने उन्हें देखकर कहा-"महाराज, इन्हें भी मिलाकर उस खिड़की



का आठवा हिस्सा ही अलंकृत हो सकता है। इनसे सात गुने रत्न और मँगवाइये। रत्नों के आते ही हम लगातार तीन साल, रात दिन काम करके, इस खिड़की को और खिड़कियों की तरह बना देंगे।" राजा को ऐसा लगा जैसे किसी ने उसका सिर काट दिया हो। यह सोचकर कि राजा अब तक जान गये होंगे कि वह कितना समर्थ था, अलादीन ने कहा-"महाराज! आप इस खिड़की के बारे में चिन्ता न कीजिये। अपने दिये हुये रत्नों को वापिस लेना मेरे लिए ठीक नहीं है। आपकी ओर से में ही इस खिड़की को बनवा दूँगा।"

राजा ने एक निश्वास छोड़ा। फिर वह अपनी लड़की से बात करने चला गया। इस बीच अलादीन ने दीप के भूत को बुलाकर कहा- "निन्यानवीं खिड़की को भी औरों की तरह बना दो।"

कुछ क्षणों में उस खिड़की पर भी रत्न जड़ दिये गये। फिर जब राजा ने उस हॉल में पैर रखा तो वह निन्यानव खिड़की को न पहचान सका। उस हॉल में कई बार घूमने के बाद उन्हें मालूम



हुआ कि उस खिड़की पर काम पूरा हो चुका था। उसने अलादीन की ओर मुड़कर कहा-"अलादीन, ज्यों ज्यों मैं तुम्हें देखता जाता हूँ त्यों त्यों मेरा आश्चर्य बढ़ता जा रहा है।"

राजाने अपने मन्त्री से कहा-"अब क्या कहते हो?" मन्त्री ने कहा-"सब ईश्वर की कृपा है।" परन्तु मन्त्री के मन में यह सन्देह पक्का होता जाता था कि अलादीन कोई जादूगर है और उसके आधीन कई दुष्ट शक्तियाँ हैं।

तब से राजा शाम को अपनी लड़की के घर जाता और दामाद और लड़की के साथ समय बिताता। यद्यपि वह रोज उनका महल देख रहा था तो भी उसको उसमें रोज नई-नई चीजें दिखाई देतीं। यद्यपि अलादीन इतना बड़ा हो गया था तो भी उसमें अहँकार न आया था। वह अपने बचपन की गरीबी न भूला था। वह हमेशा गरीबों की स्थिति सुधारने के लिए प्रयत्न किया करता। जब कभी वह बाजार में निकलता तो उसके गुलाम उसके पीछे सोना बिखेरते चलते। उसके महल में, सुबह शाम पाँच हज़ार आदमियों को भोजन बाँटा जाता। इतना बड़ा होने पर भी क्योंकि उसमें लवलेश अहँकार न था इसलिये बड़े छोटे सभी को उसके प्रति अभिमान था।

उसकी पत्नी के बारे में तो कहना ही क्या? उसका विश्वास था कि पूर्व जन्म के पुण्य के परिणाम में उसको बैसा पति मिला था। उसका ख्याल था कि उसके जैसा पति कहीं न था। अलादीन पत्नी और माँ के साथ, आराम से जिन्दगी गुजारने लगा।

(अभी और है)



CHANDAMAMA (Hindi) APRIL 1958 Regd. No. M. 5452



रूपधर की यात्राएँ